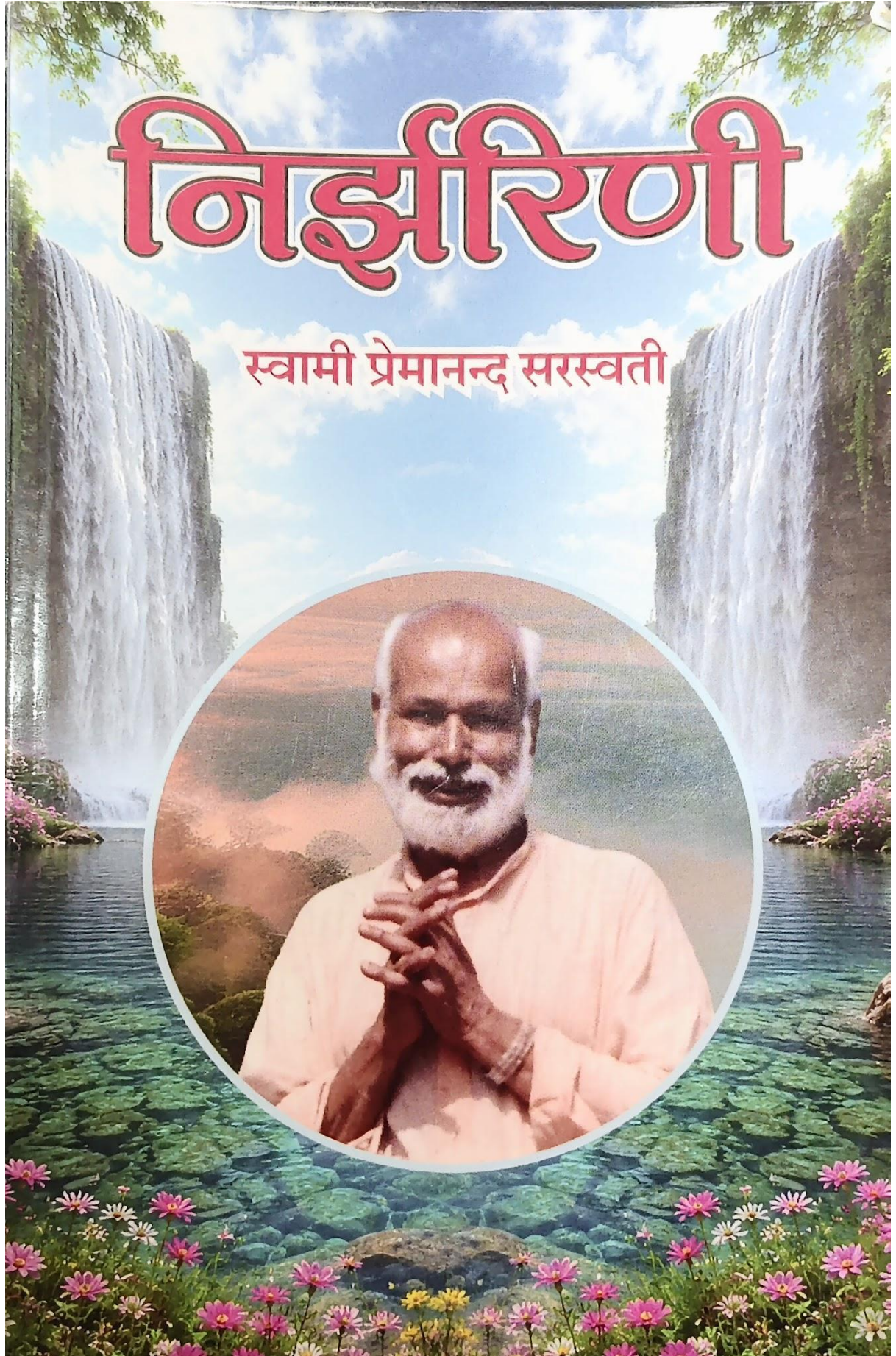




निर्झरिणी

स्वामी प्रेमानन्द सरस्वती

प्रकाशक

द डिव्वाइन लाइफ सोसायटी

पत्रालय : शिवानन्दनगर- २४९१९२

जिला : टिहरी गढ़वाल, उत्तराखण्ड (हिमालय), भारत

www.sivanandaonline.org, www.dlshq.org

प्रथम हिन्दी संस्करण : २००४

द्वितीय हिन्दी संस्करण : २०२६

(१००० प्रतियाँ)

PRICE: 190/-

‘द डिवाइन लाइफ सोसायटी, शिवानन्दनगर’ के लिए
स्वामी अद्वैतानन्द द्वारा प्रकाशित तथा उन्हीं के द्वारा ‘योग-वेदान्त
फॉरेस्ट एकाडेमी प्रेस, पो. शिवानन्दनगर, जि. टिहरी-गढ़वाल,
उत्तराखण्ड, पिन २४९१९२’ में मुद्रित ।

For online orders and catalogue visit: dlsbooks.org

श्रीकृष्णार्पण के रूप में
परम पूज्य प्रातःस्मरणीय श्रद्धेय
श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज
के
पदपल्लव में सादर समर्पित !





FOREWORD

Om Sri Satguru Paramatmane Namah!
Om Sri Vishwanathaya Namah!

Herein are put down a few thoughts prompted and inspired by going through the contents of the book of 65 feeling-full Hindi poems by Sri Swami Premananda Saraswati Maharaj of Sivananda Ashram, Geneshpur (Gawana) village a few kilometers further on towards Maneri from the sacred Himalayan Tirath-sthan of Uttarkashi.

Lofty and sublime thoughts and feelings arise spontaneously from the mind and heart of a person living in solitude and surrounded by Nature in its pristine purity unspoiled by the artificiality and earthliness of the modern materialistic world of the plains below. The poet author has been living more than forty years in the Himalayan surroundings leading a life of self-reliance, devotion, contemplation and spiritual practice combined with compassion, service, helping and giving in charity to mendicant monks, pilgrims on the way to Gangotri, poor villagers of the area and anyone in difficulty who approached him needing help.

These poems express high sentiments, love of virtue, idealism and spiritual fervor and aspiration directed towards God Almighty. I was touched to notice that one poem was directed towards the Divine pair, Sri Radha and Krishna inside their bower of thickly growing creepers and flowers, situated under a tree right opposite to Swamiji's Ashram building. (poem No. 52, page 119). Similarly, it was touching to see that two poems were addressed to his spiritual and long-time fellow resident in holy Uttarkashi area, His Holiness 108 Sri Swami Chaitanyanandaji Maharaj, one poem felicitating him upon his 75th Birthday Anniversary (poem No. 57, page 145) and the other, alas, commemorating him upon his attaining "Maha Samadhi", (passing away) very recently, in the last poem at the very end of the book.

I wish this collection of poems a warm reception by the reading public and widest possible circulation among those who appreciate poetry.

Swami Chidananda
President
The Divine Life Society
Rishikesh

अवतरणिका

जब कभी अंतर्मुखी मन भावना सागर के उद्वेलित रमणीय तट पर इतस्ततः बिहार करता हुआ भावलहरों के ऊपर दृष्टिपात कर लेता और विवश होकर तरंगायित उस जल में प्रवेश कर गभीरतम प्रदेश में पहुँच जाता है और समाहित हो जाता है, तब पुनः तट पर लौटना नहीं चाहता है। रोमांच भरा शरीर अथवा नीर भरा नयनों से भाव सागर के उन आनन्द उत्स्वसित लहर से टकराता हुआ वह अपना अस्तित्व को चिरकाल तक खो देना पसंद करता है। उस भावावेश स्थिति से बरवश वह कदाचित लौट आने पर फिर उस पूर्व स्थिति में वापस जाना सदा उसके वश में नहीं होता है। अतः उन क्षणों के हृदय के उदगारों को अगर लिपिबद्ध कर दिया जाता है, तो उसके स्मरण मनन से पुनः वह अनोखे आनन्द प्राप्ति में कभी सहायक सिद्ध हो सकता है।

अतः मन के उस घड़ी के स्पंदन को लिपिबद्ध करना आवश्यक पड़ता है। यदि किसी कारण से अपनों के सामने वह उद्गार प्रगट करना पड़े, तो वह दूसरों के मन विनोद का भी एक साधन बन जाता है। अतः कहा गया है कि: काव्य शास्त्र विनोदेन कालो गच्छति धीमताम्। वास्तविक परानंद में परानंद प्राप्त करना तो प्रेमानन्द का लक्षण माना जाता है। अतः कभी स्वान्तः सुखाय लिपिबद्ध किये गये संकलनों को प्रकाशन के पथ पर पथिक होना पड़ता है। वर्तमान प्रकाशन का एकमात्र उद्देश्य यही है।

भाव सागर के वे लहरें जो यहाँ एकत्रित हैं, वे नाना रंगों से रंगित हैं: विनीत भावः कुछ मृदु गंभीर होना पसंद किये हैं। मधुर भावः कुछ मधुर भावों के पोषक बनने की इच्छा व्यक्त किये हैं। भक्ति भावः कुछ राधा-कृष्ण के मधुर श्रृंगार से प्लावित होकर प्रेरणा स्रोत बनना चाहे। आक्रोश एवं कटाक्षः कुछ भावनाएँ भगवान के निकटता के कारण उनके प्रति आक्रोश प्रदर्शन करने को व्यग्र हुए हैं। रहस्य एवं व्यंग्यः कुछ रहस्यात्मक और कुछ व्यंगात्मक भी बन गये हैं। सामाजिक चिंतनः कुछ सामाजिक तथा व्यक्तिगत जीवन का चिंतन धारा को दर्शा रहे हैं। दार्शनिक स्वरूपः समस्त भावनाएँ प्रत्यक्ष अपरोक्ष रूप से दार्शनिक कल्पनाओं के उपहार बनना पसंद किये हैं। लेखक के हृदय पट में एक जिज्ञासा जागरित हो रहा है कि क्या सुधी रसिक पाठकों को इस संकलन में षड्स व्यंजनों का भरपूर रसास्वादन उपलब्ध हो पायेगा ?

समय अनुसार परोपकारी जन परोपकार में ही अपनी आत्म-तृप्ति का अनुभव करते हैं। कवि के जो अंतरंग सुहृद गण इस प्रकाशन कार्य में प्रेरणा, प्रोत्साहन तथा त्रिविध (तन, मन, धन) दान देकर सहभागिता निभाये हैं, उनको धन्यवाद देने के लिये कवि शब्द-शून्य है। वे बंधुगण नाम के नहीं अपितु काम के ही प्यासी होकर निष्कामता का ज्वलंत आदर्श स्थापित कर दिये हैं। चिर कृतज्ञ कवि अपने अंतरतम से उनके सर्वविध कल्याण की कामना करता है।

इस द्वन्द्वात्मक जगत में दोष रहित गुणों का अन्वेषण करना न केवल नियति के विरुद्ध आचरण होगा, अपितु असंभव होने के कारण हास्यास्पद भी होगा। सुधी विवेकी पाठक वृन्दों से सविनय आशा है कि वे हंसवाहिनी बुद्धि रूपिणी माँ शारदा के वाहन हंस का ही पदानुशरण करेंगे। लेखक के मानस से निसृत यह जो रस कर्णों का संकलन मान-सरोवर रूप लिया है, उसमें कवि, कोविद और रसज्ञ पुरुष हंस तुल्य आनन्द पूर्वक नित्य विहार करेंगे। यह संसार समष्टि मन ब्रह्मा का एक कल्पना मात्र ही है। कविता भी एक सुसंस्कृत कल्पना ही है। संसार रूपी कविता की रचना कर ब्रह्मा जी कवि रूप में नामित होते हैं। रस शेखर श्रीकृष्ण के कमल-कमनीय चरणों में यही प्रार्थना है कि वे रस पिपासु पाठकों के हृदय-कंज-कली के उपर उदारतापूर्वक निज अलि-चरण-रज स्थापित कर उसके विकाश में स्वयं विलास करें !

यह संसार समष्टि मन ब्रह्मा का एक कल्पना मात्र ही है। कविता भी एक सुसंस्कृत कल्पना ही है। संसार रूपी कविता की रचना कर ब्रह्माजी कवि रूप में नामित होते हैं, सुशोभित होते हैं।

वासनात् वासुदेवस्य वासितं भुवनत्रयं।

वासुदेव के वासनाओं से यह त्रिभुवन ओत-प्रोत है। अतः यहाँ समस्त वस्तु स्थिति वासुदेव का ही है। अतएव यह कविता संग्रह जगद्गुरु वासुदेव का होने के कारण उन्हीं के पद-पल्लव में सादर समर्पित है।

हरिः ॐ तत्सत् 'श्री कृष्णार्पणमस्तु'

विनीत

लेखक

श्रीहरिः

दो-शब्द

श्रीमत् स्वामी प्रेमानन्द सरस्वती जी महाराज द्वारा प्रणीत काव्य संग्रह निर्झरिणी अध्यात्म एवं साहित्य साधना का वह सामंजस्य है जिसमें आत्मानुभूति को भाव तथा भाषा के माध्यम से ग्रन्थ साकार किया गया है। इस नाना भाव जनित ग्रन्थ की उपादेयता साहित्य साधना के उन सभी साधकों को अनुप्राणित करती रहेगी जो विविध विषयक विचारों के महासिन्धु में अवगाहन करेंगे। अध्यात्म में रसमयी साहित्य साधना हमारे आर्ष ग्रन्थों की परम्परा रही है। उसी परम्परा का अनुपालन पूज्य स्वामीजी के ग्रन्थ में परिलक्षित है। इसमें भाव गाम्भीर्य के साथ भाषाई संरचना अपने आप में अद्वितीय सी प्रतीत होती है। इस ग्रन्थ में विविध भाव-रत्नों को स्वानुभूति के निकष पर रखकर स्वामीजी ने स्वान्तः सुखाय एवं लोकहिताय की सद्भावना से भावित होकर इसका प्रणयन किया है। चूँकि प्रणेता यहाँ अध्यात्म जगत का एक ऐसा पथिक है जो साधन, साधना और साध्य के बीच पड़ने वाले अनेक पड़ावों से जिज्ञासुओं को परिचय कराता हुआ आगे बढ़ता है तथा अध्यात्म जगत की समस्त लेकिन फिर भी "नूर-पुर जिन्दगी खो रहे हैं लोग, सूरज उगा हुआ है मगर सो रहे लोग।"

मुझे अति प्रसन्नता है कि पूज्य स्वामीजी का यह अदभुत कविता संग्रह समस्त साहित्य साधकों को साधना के पथ पर अग्रसर करने के लिए ग्रन्थरूप भास्कर कविता रूप विविध रश्मियों से संयुक्त होगा। अस्तु

"तमसो मा ज्योतिर्गमय"

- मुरारी लाल शर्मा "ब्रजवासी"

प्राक्कथन

साहित्य किसी की धरोहर न होकर अभिव्यक्ति की वह शैली है जो स्वस्फूर्त अन्तर्मन की आवाज बन कर, गीत, उपन्यास, नाटक, कविता आदि विद्याओं के रूप में कवि के अन्तरात्मा का दर्पण होता है। कविता किसी व्यक्ति के निर्माण की एक कार्यशाला नहीं, अपितु स्वान्तः सुखाय की वह अनुभूति है जो जीवन के उतार-चढ़ाव को प्रदर्शित करती है। ऋषि परम्परा में साहित्य सृजन समाज की आधारशीला रही है। इसी परम्परा में यह कविता संग्रह सुसाहित्य की अपना विशेष महत्व रखता है।

यह कृति जाति, धर्म एवं समुदाय के बन्धनों से मुक्त रहकर अपने आराध्य के समक्ष समर्पण का एक भावबोध है। इसमें अलंकार, छन्द आदि को दृष्टिगत रखते हुए यथोचित स्थान पर उनका प्रयोग कर साहित्य नियमों के अनुरूप ढालने का सफल प्रयोग है। यथा: भुवन-भुवन बन जा वनजात तू वनज पत्र में तेरे। सलिल संग असंग रहूँ, रंग जाऊँ पराग से तेरे।

इस काव्य संग्रह में शब्द विन्यास, यमक, अनुप्रास एवं उपमा आदि अलंकारों का जिस कुशाग्र बुद्धि से स्वामीजी ने प्रयोग किया है वह महाकवि कालिदास एवं भारती की परम्परा का पोषक भी दृष्टिगोचर होता है। साहित्य सृजन के अनुरूप अथ एवं इति का इस कृति में यथास्थान प्रयोग स्वामीजी के साहित्य ज्ञान की सूक्ष्मता को प्रदर्शित करता है। जहाँ इस काव्य संग्रह में स्वामीजी साकार ब्रह्म को अपना लक्ष्य मानकर भक्ति रस को पोषित किया है वहीं राष्ट्र धर्म के प्रति समर्पित 'स्वतंत्रता की स्वर्ण जयन्ती' नामक कविता में स्वामीजी ने स्वतंत्रता से आज तक की जो तस्वीर खींची है वह बापूजी के स्वप्निल भारत एवं रामराज्य की परिकल्पना को अलंकृत करते हुए स्वामीजी के राष्ट्रप्रेम को प्रदर्शित करता है।

आज के समाज में साधु सन्यासी को जहाँ तपस्या के बन्धनों में बांधकर देखा जाता है वहीं स्वामीजी ने अपनी काव्याभिव्यक्ति के माध्यम से यह स्पष्ट कर दिया कि साहित्य किसी वर्ग विशेष की धरोहर नहीं अपितु सम्पूर्ण मानव जाति की निजी भावना का वह प्रकाश पुंज है जो बिगड़ते समाज को एक नयी दिशा प्रदान करता है। साहित्य सृजन अपने आप में युग परिवर्तन एवं हृदय परिवर्तन की एक कला है जो पथच्युत समाज को सामाजिक नियमों, रीति-रिवाजों एवं राष्ट्र धर्म के प्रति समय-समय पर जागृत करता है। इसी विधा के माध्यम से हमारे ऋषि मुनियों, साधु-सन्तों ने जब-जब समाज विघटित या पथभ्रष्ट हुआ तब-तब समाज को जगाया तथा सामाजिक मानदण्डों को स्थापित किया। इसी श्रृंखला में स्वामीजी ने पाठकों को भक्ति रस के माध्यम से मानवता के आदर्श स्थापना करने का एक सफल प्रयोग किया है।

प्रेम शब्द के भाव को कृष्ण-राधा भक्ति के माध्यम से इस काव्य संग्रह में जिस सूक्ष्म दृष्टि से रखा गया है, वह इस अथाह शब्द सागर में डुबकी लगाकर साहित्य रस के माध्यम से मोक्ष मार्ग प्राप्त करने में सहायक

सिद्ध होगा, जो साहित्य लक्ष्य प्राप्ति की आदि परम्परा रही है। स्वामीजी की इस कृति में शृंगार रस का बखूबी प्रयोग हुआ है। विषयानुकूल वर्ण शैली, इस काव्य संग्रह में अत्यन्त उदात्त एवं हृदयग्राही है। जहाँ भी इस संग्रह में शृंगार रस का प्रयोग किया गया है वह सुहृद पाठकों को आह्लाद प्रदान करने वाले माधुर्य गुणों से भरपूर, रस वृष्टि करने में सार्थक होगा, जो कविता के हृदय परिवर्तन के मूल सिद्धान्तों का पोषक भी है।

स्वामीजी का यह संग्रह, काव्य की विविधता, एवं बहुरंगी छटा को प्रस्तुत करता है। स्वामीजी की इस कृति में प्रणय का आह्वान, मनुहार की माधुरी, चिन्तन की गहराई, दार्शनिक रहस्यों की अभिव्यक्ति को अधृत करती है। साथ ही आधुनिक कविता एवं प्राच्य हिन्दी साहित्य की उभय परम्परा का निर्वहन करते हुए समाज को नई दिशा देने में सहायक सिद्ध होगी।

मुझे विश्वास है कि सुधि पाठकगण इस संग्रह में वर्णित प्रेम, भक्ति एवं कर्मठता का सूक्ष्म आनन्द प्राप्त कर लाभान्वित होंगे।

- डा० रामचंद्र उनियाल

अध्यक्ष,

रसचक्र साहित्य परिषद

उत्तरकाशी

विषय सूची

FOREWORD	6
अवतरणिका	7
दो-शब्द	9
प्राक्कथन	10
गणेश वंदना	15
वाणी वंदना	17
गुरु वंदना	19
ऊषा	21
जादुगर	25
देवी स्तुति	27
प्रार्थना	29
अनाहत	32
भजन	34
सरिता	36
भजन	38
देर क्यों देव दया के	40
भजन	42
परदेसी का विलाप	44
मन की चंचलता	46
विनती	47
श्याम शोभा	48
कब आओगे	50
सुनादो मुरली	52
प्रार्थना देवी की	54
प्रार्थना	56
प्रणाम करूँ कैसे ?	58
स्वागत गीत	60
नीच की उचाई	62
निर्झरिणी	12

तव और अब की पुकार.....	63
मिट्टी के सपूत	65
विनु वरषे मत जा.....	67
महात्मा का मन	69
अब तू चला, मैं तो चला.....	70
रघुवर ! पुकार क्यों नहीं सुनते हो ?	71
आर-पार की लड़ाई.....	73
इस पार और उस पार	75
वसंत के स्वागत	77
भजन	79
राधा विलाप	80
प्रेम की प्याला.....	82
किशलय	83
मिलन आवाहन 'कृष्ण का'	85
मिलन आवाहन 'राधा की'	86
विरहिणी राधा.....	87
हरि का राधारूप	89
प्रेम डगरिआँ	93
प्रतीक्षा	95
गुरु चरण चालिसा.....	96
दिवाली आई तुम आये नहीं	100
दीपावली	101
घायल की आहट	102
समझ	103
शबरी.....	104
श्याम सुन्दर घर आए.....	105
चाह.....	107
कुंजवन शोभा गणेशपुरं शिवानंद आश्रम की	109

गो-विलाप	110
प्रेम सरिता.....	112
राधा-विरह-विलाप.....	114
स्वतंत्रता की स्वर्ण जयन्ती	126
श्रद्धाञ्जली, अगस्त २००१	130
श्रद्धेय परम पूज्य ब्रह्मलीन स्वामी कृष्णानंदजी महाराज को श्रद्धाञ्जली समर्पित, ६/१२/२००१	132
श्रद्धेय स्वामी चैतन्यानन्द जी के महासमाधि पर श्रद्धांजली.....	137
माँ की पुकार	140
मेरी लीला आपार	143
स्वाधिनता की पुकार.....	145
त्रिजटा संदेश	148
झाड़ू गीत	149
संध्या के प्रति	151
राधे-कैसे करें श्रृंगार	154
दिल की दर्द.....	156
प्रभु आये.....	157
आनंद	158
भजन	159
चिदानन्द षटपदी.....	160
गुरु पाद पूजा	161
प्रार्थना	163
तोते	164
गुरुवर - आपका मुस्कान	166
नियति की निति निराली	167
मौन क्यों ?	169
गंगा आगमन गाथा	171
संक्षिप्त जीवन-परिचय.....	181

गणेश वंदना

करीवदन करो दया मुझको,
वंदन तब पद किशलय को ।।
करना है विघ्न अगर तुमको,
करो दलन दुष्टमति मनोरथ को - १

काम, क्रोध, लोभ आदि अरिमोरे,
दहन दावानल यथा तृण को।
करुणा तुम्हारी अमोघ अस्त्र,
कर ले के बिजय करूँ रिपुअन को - २

कमलासन, गरुडासन जिनको,
कर्मारंभ करहीं मन पूजन को।
देव, दानव, मानव, ऋषिअनको,
देत होत प्रसन्न चित्त वर वरों को - ३

सिन्दुरारुण विग्रह लम्बोदर,
सूप कर्ण एकदसन सुमनोहर।
पर्श, पुस्तक, मोदक, अंकुशकर,
शिर शोभित मलयज, मुकुटवर - ४

मुषिकासन ! आसन प्रथम तव,
जो रचित अर्चित भक्ति रत।
धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष होत तब,
सुख सकल सुलभ सिद्धि रिद्धि युत - ५

विश्वनाथ सुत, गणनाथ प्रभो,
सब नामरूप क्रिया-रूप देव !
सब नामरूप क्रिया रहित विभो,

वर्ण संघ न सकई वर्णन स्तव। - ६

घनतमसा मोह मम, तुम हो घन,
दया दामिनी दमके वारण वदन !
अज्ञान तिमिर को मिहिर सम,
करी कंजवन यथा करो मर्दन। - ७

करो दया करो दया मुझको
तजूँ माया-भ्रम भजूँ चरणन को।
दया के भूधर दया रज को
करो दान दीन एक याचक को - ८

टिप्पणी :-

करी - हाथी,
किशलस - कौपलें,
दावानल- वन की आग
अमोघ - विफल नहीं होने वाला,
कमलासन- ब्रह्मा,
गरुडासन -विष्णु,
वर - श्रेष्ठ,
मलयज - चंदन,
घनतमसा -घन अंधकार,
घन- बादल,
दयादामिनी - दया रूपी बिजली,
बारण- हाथी,
अज्ञानतिमिर - अज्ञान अंधकार,
मिहिर-सूर्य,
कंजवन - कमलवन,
भूधर - पर्वत,
रज - धूल

वाणी वंदना

वाणी फुरत तब दया से देवी,
वाणी ! तुम्हें वंदन करूँ कैसे।
नयनहीन हूँ चारु चंद्रातप,
रजत रश्मि वर्णन करूँ कैसे - १

अशेषवदन-शेष, कवि कोविद,
बोल न सकई महिमा को।
लघु पिपीलिका थाह कि पावत,
अति अमित वरुणालय को - २

शिशु संतान बचन सुनत मात,
अर्थ विहीन भी हुलसित जैसे।
बचन मम निपट नीरस अपि
प्रिय लागहूँ जननी तुम्हे तैसे। - ३

सहस्र शृंग-तूंग-तुहिन गिरि,
भ्रम से भ्रमत एक कण तुषार के।
तैसे कविता वन विहरण,
हास्यास्पद मा ! बिनु अनुग्रह के - ४

कबिता-लता आश्रयदाता तरु,
तुम सकल शब्द अर्थमयी।
तुम ही कवि जग-मग प्रदर्शनी,
सकल कला रस-शास्त्रमयी - ५

भव, माधव, उमाधव, बासव,
देव, दानव भजते तुम्हें कैसे।
शश शशधर को चातक जलद को,
प्रभा प्यासी कंज प्रभाकर जैसे - ६

रजत राजहंस पृष्ठ विहारिणी,
वीणा-तंत्री निनाद विलास के।
पुस्तक मौक्तिक माला परायणी,
तुम हो परावर प्रिय नायिके - ७

कोटि भानु सम भासवती हो,
कोटि शशांक सम कान्तिमती।
सागरी ! कृपा प्रार्थी हूँ,
संस्कृत करो मम भ्रान्तमति - ८

टिप्पणी :-

चारुचंद्रातप - सुन्दरचंद्रकिरण,
रजतरस्मि - सफेदकिरण,
लघुपिपिलिका - छोटाचिंटी,
अमितबरुणालय - अथाहसागर,
तूंग - उच्च,
तुहिनगिरि - हिमालय,
तुषार - बरफ,
भव-ब्रह्म,
माघव - विष्णु,
उमाधव - शिव,
बासव - इंद्र,
शश - खरगोस,
शशघर - चंद्रमा,
प्रभाप्यासी - किरणइच्छुक,
कंज - कमल,
प्रभाकर - सूर्य,
रजत - सफेद,
परावर-परमब्रह्म,
संस्कृत करोमम भ्रान्तमति - मेरे विश्रुंखलित बुद्धि को श्रुंखलित कर दो

गुरु वंदना

घन तमाच्छन्न यह मोहमयी निशीथिनी,
नृत्य करत नित पिशाच पिशाचिनी।
उल्लुक स्वान स्वन मरम विदारक,
कराल काल का नित्य क्रीडास्थल यह,
संग कालिका, भूत, प्रेत सहायक - १

धधकती यहाँ सदा ज्वाला चिता अग्नि का,
मिटा देती कभी क्षण भर, तम रजनी का।
श्मशान यह, रहवासी शोकातुर जन,
हाहाकार मचरहा यहाँ, राह नहीं दिखता, सब भीत मन- २

उत्थित धीर वीर अतिमानव तुम कौन ?
नव वारिद बिच विद्युल्लेख सम स्थित मौन,
स्मित मुख, कर लिये रश्मि राशि को,
विभासित करता दिगन्त को,
पथ भ्रान्त, श्रान्त, क्लान्त, दुःख हन्त को ३

सद्गुरु पद पल्लव में हूँ नतमस्तक,
मोह-जामनी जग, तुम पथ प्रदर्शक।
जागरित कर दो सूप्त व्याथित को,
सुधाकण विखर कर, हिमकण को रविकर यथा,
विगलित कर दो जरा, मरण को - ४

टिप्पणी :-

घन तमाच्छन्न	-	घना अंधकार से आवृत
मोहमयी निशीथिनी	-	बुद्धि को भ्रमित करने वाली रात
उल्लुक	-	उल्लु
स्वान	-	शिआल आदि

स्वन	-	शब्द
कराल कालका नित्य क्रिड़ा स्थल	-	श्मशान, संसार
श्मशान	-	संसार से तूलना किया गया है।
उत्थित	-	संसार से परे - जगे हुये।
अतिमानव	-	महात्मा
वारिद	-	बादल
विद्युल्लेख	-	बिजली
रश्मिराशि	-	ज्ञान आलोक पुंज
दुःखहन्त	-	दुःखी
मोहजामिनीजग	-	मोह में डालने वाली रात्रि रूपी संसार
सूप्त	-	सोये हुये अज्ञान से मोहित हुये
सुधाकण	-	अमृतकण
रविकर	-	सूर्यकिरण
विगलित कर दो जरा मरण को	-	बुढ़ापा तथा मृत्यु से रहित करके मोक्ष पद दे दो।

ऊषा

हिमाद्रि तुंग शुभ शिखर
हिमांशु शेखर रूप लिया
सघन जटा में द्वादशी शशी
सघन दूजा सा उदय हुआ। - १

उमा अग्रजा मृदु गंभीर
मंद-मंद सा गरज रही
पूर्व दिशा में ऊषा नागरी
अपूर्व दृश्य सिरज रही। - २

गंग तरंग मुकुर मानि कै
मुख मनोरमा निहारती है
सीमंत सिन्दुर सीमान्त तजके
नभ लालिमा बिराजती है।- ३

नव किसलय मधुर-अधर का
मंद हास बिकाश निराली है
अपना रही दंत पंक्ति शोभा
अमल कमल कुल श्वेत कली।-४

तरुणी ऊषा की आरुणी आभा
बारुणी विहवल सी लग रही
मिलन माधुरी सखा अरुण की
सलज विजन में जाग रही।-५

मठ मंदिर में ढोल मृदंग
शंख घंटियां बाज रही
ऊषा योषिता उषत उरमें
ताल ताल पे नाच रही।-६

जटिल कबरी झटक गई है

मल्ली-तारका बिखर गई
कल कंठ के कंठ बैठी
आवाहन गीत गा रही।-७

मंद सुगंध मलय वात
उन्माद भरते बह चली
रंग बिरंगी मेघ दूत सा
बादल खंड आ मिली। - ८

मौन भाषा में ऊषा नागरी को
मरम बाते कुछ बोल गई
'कल मिलेंगे सखी सहेली'
जग गया जग भोर भई। - ९

ऊषा की यह मोहक नृत्य
भर रही मंगल जग में
जीवन धारा की उत्संग तरंग
बढ़ा रही उमंग हर उर में।-१०

लगा बहने प्राण समीरण
अंबु अबनी अम्बर में
लता पादप पर्वत में
बिनुपद द्विपद चतुष्पद में।- ११

चिदानंद का आनंद रस
आभूत संप्लव सरस किया
एक रस जाग्रत हुआ
स्वप्न सुषुप्ति विस्मृत किया - १२

आकाश का प्रतिबिम्ब जल में
उछल-उछल कर बोल रहा
'है बिम्ब जीव चिदाकाश का
उलट सुलट कर भूल रहा'। १३

धरा देवता मांग रहे हैं
धरा ! दे वता हमें संगीत
तेरे वक्ष में सफल जीवन का
हमें दे बता गुप्त इंगीत - १४

शुभ घड़ी में यह वर दो विभु !
निखिल भुवन हो सुखी निरामय
शुभ दर्शक शुभ चिंतक हो सब
दूर-दूर हो दुःख दूर्भय। १५

असत्य अमा का अंत पर ही
सत्य प्रभात का उदय हो
तम मिटे, प्रकाश आवे
अमर ऊषा की विजय हो । १६

स्वागत क्षिति में राजा ययाति
स्वर्ग सुषमा उतार लावे
सदा यहाँ रामराज विराजे
सौख्य शांति नित अटल रहे। १७

सृष्टि प्रथम प्रभात सम
जाग उठो हे जीव जगत !
लख्य पाना है, न्यस्त कर दो
जीवन का ये शौर्य समस्त । - १८

टिप्पणी :-

द्वादशी शशी	-	'कृष्ण पक्ष का द्वादशी चंद्रमा। दूजा के तरह पूर्व आकाश में दिखाई दिआ
हिमांशु शेखर	-	शंकरजी,
सघनजटा	-	घनाजटा,
सघन	-	बादल के साथ
उमा	-	अग्रजा गंगाजी,

सिरजरही	-	सृष्टि कर रही,
मुकुर	-	दर्पण
सिमंत	-	स्त्री आँकाशिर का मांग,
सिमांत	-	अपना,
स्थान	-	सीमा
बारुणीविहवल	-	मद्यपान से मतवाला,
विजन	-	एकांत,
जटिलकबरी	-	जटा के तरह जुड़ा (केशका),
मल्लीतारका	-	मल्लीफूल के तरह सफेद तारे,
बिनुपद	-	लता, पेड़, पर्वत इत्यादि,
द्विपद	-	पक्षि, मनुष्य इत्यादि,
आभूत संपव	-	समस्तजगत,
धरादेवता	-	ब्राह्मण, ऋषि मुनि आदि,
अमा	-	अंधकार, रात्री,
सुषमा	-	सौंदर्य,
न्यस्त	-	लगादेना,
कलकंठ	-	कोयल,
चतुष्पद	-	पशु,
सौख्य	-	भ्रातृभाव,
ययाति	-	राजा ययाति इस घरा को स्वर्ग से भी अधिक सुखमय बना दिये थे,
शौर्य	-	शक्ति

जादुगर

घर जाना मुझे नदी के पार,
नीर भयंकर अगाध अपार।
है कोई केवट खेवनहार ?
खरचा दूँ करो पार उतार - १

सोने की नगरी मोतीन के महल,
आनंद बीथि है बीच में जंगल,
है कोई पथ दिखावनहार ?
पहुँचा दो, खर्चा दूँ मन अनुसार - २

राजा को मिलना है किले के अंदर,
खाई गहरी, प्रहरी है बाहर,
है कोई उसे मिलावनहार ?
भेंट चढ़ाऊँ समेट वेदसार - ३

किसमत से मिले एक जादूगर,
मरम पढ़ायो, भयो वन भस्मीसार।
नदी में न जल, किला खुल्ला दुआर,
कारज कियो मेरो अतीव दुस्तर - ४

मत्त वारण देत चरण वारिज में,
कमलनयन ! नत अमित वार पद में,
संसार कारण ग्रहण किजो बल में,
संसार का पार उतार दिजो पल में - ५

टिप्पणी :-

घर	-	परम धाम
नदी	-	आशा की अखंड धारा

सोने की नगरी मोतिन का महल	-	परम धाम
आनंदबीथि	-	आनंद बजार
बिच में जंगल	-	बिच में वाधा देने वाला संसार ही जंगल है
राजा	-	परमेश्वर
किला	-	माया, अज्ञान
खाई, प्रहरी	-	माया के सहायक काम क्रोधदि
जादुगर	-	गुरुजी
मरम	-	तत्त्व
मतवारण	-	मतवाला हाथी - मन
अमितवार	-	अनेक वार
संसार कारण	-	मन
बल में	-	बलपूर्वक

देवी स्तुति

वर वरदा शारदा ! निरदा भव दया अम्बुके,
अम्बिके ! तुम आकर निकर सगुण के।
भव भामिनी ! भव तारिणी! नाशिनी भव देवी अब भव भ्रम के,
अम्बिके ! भव कर्णधार तव नाम नाव के।-१

शिशु सुत हूँ मानो मन में मा, पिआसी हूँ पियुष रस के,
अम्बिके ! तुम पय हो जननी पयोधर के।
सुधा-सिन्धुजा हिम-अद्रिजा अजा अग्रजा तुम वसुदेवज के,
अम्बिके ! भय नाशय मम जनन मरणज के।-२

महादनुजदल बल संहारिणी पालिका देवन के,
अम्बिके ! कामधेनु तुम भक्त जनन के।
उद्भवस्थिति लय क्रिड़ा विनोदिनी,
ध्रुविलास कोटि भुवनन के अम्बिके !
परम हंस यति गति विधायिके । - ३

दोष गुण मम तोय पय मिश्रण त्रिगुणन के,
अम्बिके ! तुम हो पयग्राही राजहंस रसिके।
कंज लोचनी कुंदहासिनी आनन सुन्दर कोटि कुमुद बन्धु के,
अम्बिके! विलम्ब करते क्यों दया दान के ? -४

शत क्षिति सम क्षमादात्री हो, धात्री सब भूतन के,
अम्बिके! नतसिर हूँ, तुम क्यों नत मुखके ?
जाऊँ कहां तजि अरविन्द पद बोलो मा कैसे ऐसे शरणदके ?
अम्बिके ! गति न आन दीन हीन मतिनके। -५

टिप्पणी :-

वर	-	श्रेष्ठ
वरदा	-	वर देने वाली
नीरदा	-	बादल
निकर	-	समुह
पयोधर	-	स्तन
सुधा सिन्धुजा	-	लक्ष्मी
हिम अद्रिजा	-	उमा
अजा	-	सरस्वती
अग्रजा	-	बड़ी बहन
वसुदेवज	-	कृष्ण
जनन मरणज	-	जन्म मृत्यु से पैदा हुआ
कुमुद बन्धु	-	चंद्रमा
नतसिर हूँ	-	नमस्कार कर रहा हूँ
तुम क्यों नत मुखके	-	तुम क्यों विमुख हो ?

प्रार्थना

तोयनिधि तट में आकर के,
अगर पिआसी रह जाऊँ।
दयानिधि ! बोलो तो मुझ से,
कहाँ अरु प्यास को बुझाऊँ ? - १

जलधर जलधि पर जाके,
अगर मुसल धारा वरसे।
बिचारा चातक पिआसी रहे,
चातक बन्धु नाम कैसे ? - २

त्रिजगत जेता के उपर,
अगर हेम चवँडोले।
रंक भिखारी भुखारहे,
'दीनबन्धु' पागल बोले। - ३

'विश्वम्भर' नाम सुन कर के,
आया हूँ द्वारमहादेव के। अहो !
भिखारी झोली खालि,
अन्नपूर्णा मालिकानी घरके।-४

विस्मरण कियो अरु सब क्या ?
सुमिरत 'स्थाणु' नाम अपने ।
कियो हिय पाषाण सम क्या ?
नयन उघारे नहीं सपने। -५

जाऊँ तो कहाँ जाऊँगा देव ?
मीन में जलाशय तज के।
तुहिन कण मैं कैसे रहूँ,
बिनु हिमगिरि श्रृंग भजके।-६

मणि बिनु तड़फत है फणि,
 कुमुद बन्धु बिनु नलिनी।
 लगुड़ बिनु हताश अन्धा,
 शिशु रो रहा बिनु जननी। - ७

कीट भृंग पतंग स्वभाव निज,
 देखो न तजते, भजते जनमज को।
 दयाल दिल में विचार करो,
 तुम शरणद कोटि भूवनन को।-८

देव दया अरुणोदय हो,
 मम आरत है अमा-रजनी।
 तब दया वारणराज हो,
 दुःख मेरे कोमल कमलिनी। - ९

दयाकर ! दया करो मुझ पे,
 ज्ञान के आलोक परकाशी।
 भजूँ सदा पदारविन्द को,
 है जो माया मोह नासी। - १०

अपर वर दो इन नयनन को,
 वरद सदय हिय हो तब अंदर।
 ये हैं दरशन के प्यासी,
 बसो सदा यह पलक कंदर। - ११

टिप्पणी :-

जलधर, चातक बन्धु	-	बादल
त्रिजगतजेता	-	तिनलोक के मालिक
हेम	-	सुवर्ण
स्थाणु	-	शिवजी का एक नाम 'पाषाण'
तुहिन	-	बरफ
लगुड़	-	लाठी

जनमज	-	जन्मजात
आर्त	-	दुखी
अमारजनी	-	अवामस्या की रात
कंदर	-	गुफा

अनाहत

मन डोले, तन डोले, कौन सुनाया गुंजन रे, कौन सुनाया गुंजन को,
मधुर-मधुर स्वन, सुनारहा निशिदिन, किया नलिन भृंग चूम्बन रे।
कौन सुनाया गुंजन को। 'टेक'

श्रवण-पट-भेदन, मानस पट मोहन, किया बुद्धी विवेक स्तम्भन रे,
विंधडाला, मृग बाला, किया हृदय-ग्रन्थि छेदन रे।
कौन सुनाया गुंजन को ! - १

जनक, जननी, जाया, जनम साथी हुआ, स्वजन गण रिपु जान रे,
सुअसन, सुवसन, कटुहुआ प्रतीय मान रे।
कौन सुनाया गुंजन को ! - २

मृगमद, गोरचन, मलयज-बिलेपन किया समान हुताशन रे,
मणिमाला, विषज्वाला, शरदशशी शोइषी आनन रे।
कौन सुनाया गुंजन को ! - ३

सुखद इंद्र भवन, सर सरसीजवन, देखत हुआ वदन म्लान रे,
ऋतुराज, दुःखसाज लिये भ्रमत यथा भूवन रे।
कौन सुनाया गुंजन को ! - ४

आओ जी आओ मन, अनाहत वादन, सुनते रहो आठ जाम रे,
चौथे पद, बोले वेद, मिलते मिटते भव खेद रे।
गुरुजी सुनाये गुंजन को ! - ५

टिप्पणी :-

स्वन	-	शब्द
श्रवण पट	-	कान
मानस पट	-	मन
विध डाला	-	तीर मार दिया

मृगबाला हिरणी	-	सुअसन उत्तम वस्त्र
हुतासन	-	अग्नि
आठ जाम	-	आठ प्रहर
खेद	-	दुःख
चौथे पद	-	तुरीय पद
मलयज	-	चंदन
मृगमद	-	कस्तुरी

भजन

सुनो चाहे न सुनो,
मानो चाहे न मानो
सुना रहा फुरण प्रभु मनका - टेक

बालक बचन मानो प्रभो मन में,
मिटा रहा दरद निज दिलका,
तुम सरवज सबहिय बासी,
अंतरजामी जानत सब मनका,
जानो चंचलता यह शिशु चितका,
सुना रहा फुरण प्रभो मन का।- १

मैं एक नर्तक भव नाटक का,
तुम सूत्रधार रंग मंच का,
जैसे नचाओगे नाचना है वैसे,
तवाधीन सदा मन करम का,
यश अपयश है मालिक का,
सुना रहा फुरण प्रभो मनका। - २

तुम मूल कारण मैं उपकरण,
तुम महारथी मैं वाण कमाण,
जैसे चलाओगे चलूंगा ततक्षण,
जय पराजय निहित हाथ रथी का,
पुण्य पाप ही जानो करता का,
सुना रहा फुरण प्रभो मनका। - ३

मानो राजा गया घर प्रजाका,
करम किया कछु अपना ही मनका,
बोलो प्रभो फल किसको मिलेगा,
वैसे नाता तुम हम दोनों का,

घट घट बासी तुम प्राणीओं का,
सुना रहा फुरण प्रभो मनका । - ४

तुम सारथी हो तन मन रथका,
रथ जड़, न चलता निज ईच्छा का,
जिस राह लेना चलना है बरवश,
बोलो प्रभो अब 'गति' है किसका ?
कलह मिटा दो रथ सारथी का
सुनारहा प्रभो फुरण मन का । - ५

अगर पापी हूँ 'हर' नाम किसका ?
धार्मिक हूँ तो तुम सेतु धर्म का,
करम अकरम हुआ सब अरपण,
चरण सरोज में दीन शिशुका,
जानो इक रजकण निज चरण का,
सुना रहा फुरण प्रभो मन का । - ६

तुम माता पिता चरा चरका,
साथी जीवन का, धन हो गरीब का,
तब दया बिनु नीरस जीवन,
सरस करदो दे दान दया का,
इतनी विनती सुनो निज सुत का,
सुना रहा फुरण प्रभो मनका । - ७

टिप्पणी :-

राजा	-	घट घट बासी भगवान
प्रजा का घर	-	जीव का हृदय

सरिता

सरिता ! अब तेरा बहना है बिरथा -टेक

लगता, पति मिलन अति कठिन है।

पति पद बिनु तेरी रति कैसे बनिता ?

सरिता ! अब तेरा बहना है बिरथा।

धारा श्रावण यथा धारा लोतक मयी

धरा गंड स्थल की तू प्लाविता ।

पति जलनिधि दया निधान है

दया कण हुआ दुर्लभ सर्वथा।

सरिता ! अब तेरा बहना है बिरथा।

हृदय-कमण्डलु निर्गता

शिव शिखा-नेत्र कोण धारिता।

विष्णु पद में तू बिलीन हो गई

विष्णु पद बिनु परम पुनिता ।

सरिता ! अब तेरा बहना है बिरथा।

त्रिपथगा सम परम पावनी

भक्त जनन के मरम निसृता।

अंत करूँ कहाँ अनंत ! तुम बोलो

पद-पयोधि बिनु हुई अनाथा।

सरिता ! धीरज धरो बहना न बिरथा ॥

टिप्पणी :-

सरिता - आंशुकी धारा का उपमा

लोतक - आंशु

धरा-गंडस्थल - गाल को पृथिवी माना गया जिसमें सरिता बहती है।

की तू प्लाविता	-	तू धोडाली
पति जलनिधि के तुलना	-	सरिता का पति सागर है, यहाँ अनुरूपी सरिता का पति दया सागर भगवान माना गया है। सरिता की यहाँ गंगा के साथ तुलना की गई है।
विष्णु पद	-	आकाश, शून्य तथा नारायण के चरण
त्रिपथगा	-	गंगा
मरम निसृता	-	हृदय से निकली हुई
पद-पयोधि	-	नारायण के पद ही सागर है जहाँ अश्रुरूपी सरिता का अंत हो सकता है।

भजन

भयलागे हिय काँपे थर-थर
भक्त कैसे कहलाऊँगा
माला हाथ, माथे तिलक मनोहर
हरि को अगर भूल जाऊँगा-१

विविध उपचार पूजा आडंबर
मंदिर अंदर दिखलाऊँगा
घट घट वासी वासुदेव को
यदि पल भर नहीं ध्याऊँगा - २

रट-रट के कुछ शास्त्र तत्वसार
अपर से गाल बजाऊँगा
लोग बोलेंगे महाज्ञानी पंडित
निज उपदेश भूल जाऊँगा-३

सदाचार हीन पर पीडा
पर निंदा में मन लाऊँगा
बारम्बार धिक्कार यह जीवन
पशु से हीन कहलाऊँगा -४

करम बचन मन अभिन्न सो महात्मा
भिन्न सो दुरात्मा नहीं बनूँ
काम क्रोध के चेला बनकर
हरि भगत कैसे मानूँ? -४

गुरु जन चरण पूजन न किया
अपर से मान पूजन चाहूँ
दिया सो पाया अटल वेद वाणी
दिया न कैसे सुख पाऊँ? -६

जग दूर्लभ यह नर तन पाकर
जग नाता अगर जोड़ूं
तजि पारश मणि भजू पाषाण को
हरिनाता अगर तोहूँ-७

हरिकथा हरिभक्त संग तजि
संसारी के संग कर लूँगा
भय लागे हिय काँपे थर-थर
भक्त कैसे कहलाऊँगा ?-८-

देर क्यों देव दया के

देर क्यों देव दया के ?

खोल दो नेत्र अभय के-टेक

आया हूँ देव द्वारतेरे

खोलो पट अब दया के,

डूब रहा कोई धार बीच नर

खोलो रज्जु तट नाव के।

अति आतुर निरीह कोई इक

रो रहा कारागार पे,

तोड़ों ग्रन्थि हृदय के देव

खोलो द्वारबन्धन के।

प्रचंड प्रभंजन ताड़ित कण

महा गगन भटक रहा,

महा मरुभूमि, साहारा में इक

बारि बिना तड़फ रहा।

काला नागने डसलिया इक

रो रहा विष ज्वाला के,

चतुर भेषज देर क्यों आज

खोल दो पेटि बुटिओं के।

अन्नदाता न गुण परखते

भूखे को देते अन्न सार,

नाविक नहीं पथिक परखते

खरचा ले उतारे पार ॥

करम-धरम धन हीन रंक हूँ
भावे लो लोतक घारा,
खरचा समझो अरचा समझो
भव-धारा तार दो पारा।

तोड़ना नहीं शिशु से नाता
जुड़ा देना निज छातिपे,
जुड़ा देना संतान मस्तक
चरण कमल के पराग पे।

जुड़ा देना हतभागे पलको
दरश प्यासी लोचन पे,
जुड़ा देना तब अभयद कर
नत बालक के मस्तक पे।

देर क्यों देव दया के ?
खोल दो नेत्र अभय के ॥

टिप्पणी :-

भेषज	-	वैद्य।
अभयद कर	-	अभय देने वाला हाथ

भजन

तोड़ दिया दुनिया से नाता
आशा रही पदपे।
तोड़े यदि तुम मुझ से नाता
बज्र पड़े शिरपे - टेक

अग जग में सब गाते हैं
हरि अधम उद्धारकहैं
मो सम अधम ढूँडे नहीं पावे
पाप-पिंड पालक है।
नहीं तारे तो कलंक लगेगा
पूर्ण सुधाकर पे,
तोड़े यदि तुम मुझ से नाता
बज्र पड़े शिरपे। - १

जल दाता जल घर, सरोवर
तरुवर, समदरशी,
अनल, अनिल अम्बर तरणि
तरणी, धरणी, शशी।
सम भाव तुम इनको सिखाया
दोष देखा मुझपे,
तोड़े यदि तुम मुझ से नाता
बज्र पड़े शिरपे।- २

मत गिनो अबगुण अब मेरे
हैं असंख्य घनेरे,
छोटासा गुण तव गुण गाया
प्रभुजी उदार बड़े।
माना भगत क्रोधी भृगुको
चरण चिह्न उरपे,
तोड़े यदि तुम मुझ से नाता

बज्र पड़े शिरपे । - ३

काम क्रोध लोभ मोह शिशिर हैं
पद-आशा पादप है,
तड़फ-तड़फ मुरझता देखो
हुआ आज पतझड़ है।
दया बसंत कटाक्ष मलय
संचार का इंतजार पे,
तोड़े यदि तुम मुझ से नाता
बज्र पड़े शिरपे । - ४

पुत्र अनाथ है छत्रपति के
जल में मीन पियासी है,
नव वारिद शावन नहीं बरषे
मेदिनी उदासी है।
यह उपहासी सुयश बिनासी
सोचो प्रभु दिलपे,
तोड़े यदि तुम मुझ से नाता
बज्र पड़े शिरपे । - ५

टिप्पणी :-

तरणि	-	सूर्य
तरणी	-	नाव

परदेशी का विलाप

अरी ! मैं तो परदेशी हूँ
जाना है घर को ।
गृह त्यागे बहुत दिन बीते
जाऊँ मिलूँ सती सुमति प्रिया को

परदेशी हूँ जाना है घर को - टेक ।

अब मुझे कुछ नहीं कठिनाई
तोड़ डालूँ तेरे निगुह बंधन को
कुमति ! गवाँई सारी कमाई तू
क्या ले जाऊँ घर दूँ प्रियतमा को ?
परदेशी हूँ जाना है घर को।-१

साध्वी सुहागिनी सदा सुखदायिनी
अनाथा रहती होगी जोहती पति राहको
मेरे शिशु संतान ज्ञान विराग दो
बरवश सहते हैं भूख पिआस को
परदेशी हूँ जाना है घर को।-२

पिता डेरा है पंगु बहेरा
अंध अकर्मण्य सहारा न किसको
माता विद्यामेरी सती शिरोमणी
पूजती होगी पति कमल चरण को
परदेशी हूँ जाना है घर को। - ३

वैमाता मेरी भेजी अविद्या
जाओ कमाओ लाओ कुछ घर को
इस नगरी में दिवस दो बाकी
कमाऊँ धरम लूँ बाट खरच को
परदेशी हूँ जाना है घर को।-४

जन्म भूमि चिर आनन्दमयी मेरी
सुधी आई यहाँ रहूँ किस कामको?
गृह त्यागे बहुत दिन बीते
जाऊँ मिलूँ सती सुमती प्रिया को
तोड़ डालूँ तेरे बाहु बंधन को
परदेशी हूँ जाना है घर को।-५

टिप्पणी :-

परदेशी	-	जीब
सुमति	-	अपनी स्त्री
पिता	-	परमात्मा
कुमति	-	कुलटा स्त्री

मन की चंचलता

मन रे ! अब तू सम्भल जा।
संकल्प विकल्प दो पंख पंखेरु,
नीड़ में अपने बस जा।
दशशाखा इस तन तरु में,
ममता के तरु न जा। - १

प्राण समीर बहे मन डोले,
ज्ञान पियूष पिए जा।
अथाह उदधि आशा अम्बर ए,
पार निहार न जा।- २

वहाँ बसत माया महा ठगिनी,
जान तिमिर न जा।
भूख लगे तो त्याग उसे तू,
और सुकृत किये जा।- ३

काम क्रोध मद की प्रबलता,
लोभ से न जूड़े जा।
मेरे मन तू अरुणाई में,
भोर भई जग जा।-४

मन रे अब तू संभल जा,
नीड़ में अपने बस जा।-५

विनती

इतनी विनती हर ! सुनलो मेरी,
कभी एक बार निहारो जी - टेक

भक्त कल्प-पादप शिव शंकर !
कभी एक बार बिचारो जी।
गिरीश गुहा सुना गिरीश बिना,
कभी एक बार सिधारो जी। - १

यह तन गिरीश, उमेश ! मानो,
गुहा-हृदय सदय पधारो जी।
बुद्धि-उमा जोहती जुग चरण,
वास कैलास को बिसारो जी। - २

अश्रु गंगधारा बहत अनवरत,
जटा एक बार बिस्तारो जी।
मानसरसि मानस मम मानो,
अब अबगाहन बिहारो जी। - ३

जलकण जलनिधि तरन चाहत है,
सब भेद विभेद निबारो जी।
रजकण चरण शरण माँगत है,
प्रभो ! 'शरणद' नाम सुमिरो जी।-४

इतनी विनती हर सुनलो मेरी,
कभी एक बार निहारो जी।-५

टिप्पणी :-

गिरीश गुहा	-	हिमालय का कंदरा
गिरीश	-	शंकर

श्याम शोभा

मान लिया मैं तो
गगन यशोदा आँगन रे - टेक।

श्याम घन आनन
श्याम घन आन न चंदन चपला न आन रे,
मधुर मधुर हास बरषत सुधारस
किलकत घननाद जान रे।- १

दशन माला मानो बकमाला
हरन चाहत नेत्र-मीन,
मीन-नयन मेरो जल-पलक बिच
छिप जाओ करो ध्यान रे।-२

झनन-झनन झन नूपुर बाजत
बरषा संगीत तान,
बहत प्रेम बात धावत इत उत
दिगन्त मात अंचल लीन रे। - ३

मदन-मनोहर बदन दिखा दो
नयन न चाहत आन,
बलिहारी तब चरण - पंकज पे
तन, मन मान रे। - ४

मान लिया मैं तो गगन यशोदा आँगन रे ॥

टिप्पणी :-

आनन	-	मुख
आन न	-	दूसरा नहीं
चंदन	-	तिलक

किलकत	-	किलकारी का आबाज
बकमाला	-	बगुलाओं का झुंड
चपला	-	बिजली

कब आओगे

बोलो प्यारे, आओगे तुम कब ?

जनम जनम के मरम बेदना,

मिटाओगे तुम कब ? - टेक

बिच्छेद-दावानल मिलन-जलद से,

जल्दी बुझाओगे कब ?

दरश-शरद से नयन-शावन धारा,

स्वकर निवारोगे कब ?

सुमन कली पे सुमन-चरण रज,

सुमन से भरोगे कब ?

मधुकर ! मधुर गुंजार सुनाओगे, मधुमत्त बनोगे कब ?

बिरही-बिटपी बिनु बिटप बिखरगई,

बिरूप बिरस भई अब ।

अंगमें अंगको आलिंगन करके,

अलिंग बनाओगे कब ?

विरही जानत विरही के हालत,

वीर ही बचावत दाव ।

प्रेमीप्रवर वीर प्रेम-विग्रह-हार,

मानो तजो हठ सब ।

कामदुधा इक कामना मना,

करना सुना नहीं कब ।

नवजलधर बपु ! नवजलधर बनो,

-मयुर हित अब ।

श्याम सुधाकर ! वदन सुधाकर,

दिखलाओगे मुझे कब ?

मिलन आनन्द रस सम सुधारस,
रस धर ! बरसोगे कब ?
बोलो प्यारे आओगे तुम कब ?

टिप्पणी :-

दावानल	-	वन के अग्नि
सुमन कली	-	अपना मन रूपी कुसुमकली
सुमन से	-	अच्छा मन से
अलिगं	-	चिन्ह रहित, एकरूप
दाव	-	तलवार का दावँ पैच
काम दुधा	-	काम धेनु
कामना	-	इच्छा
नवजल धर बपु	-	श्याम मेघ के समान काले शरीर वाले
नवजल धर	-	नया मेघ
सुधाकर	-	चन्द्रगा
सुधारस	-	अमृत जल
रसधर	-	मेघ

४ - जो विरही हो वह दूसरे बिरही का हालत समझ सकता है। जो बीर हो वह दूसरे वीर का दावँ को बचा लेता है। मालुम होता है कि आप विरही नहीं हो, मेरे विरह से दुःखी नहीं हो, परंतु आप प्रेमवीर हो। इस लिये मेरा निमंत्रण रूपी ललकार से अपने आपको बचा लेना चाहते हो। हे प्रेमी वीर! इस प्रेम की लड़ाई में आप हार मानकर, नहीं आनेका हठ को त्याग दो, आ जाओ।

सुनादो मुरली

सुना दो मुरली इकबार कन्हैया,
त्रिभुवनेश्वर त्रिनयन रिपु-मान मथन- वपु दिखादो कन्हैया।

त्रिभंग-बंध में त्रिभंग छंद में,
त्रिवेद-सार सुनादो कन्हैया। - १

महारण क्लान्त सूप्त मुचुकुन्द,
जीव-जाग्रत कर दो कन्हैया।

अज्ञान काल यवन जला दो,
ज्ञान नयन पल खोल दो कन्हैया। - २

दुष्ट दुशासन, दुःखी दुपदी के,
मान हरण मन करत कन्हैया।

न बनो जुआरी तजो द्वारिकापुरी,
बिनु पदत्राण दौडो कन्हैया। - ३

बनो याचक बंधु बहाने,
दुर्योधन घर जाओ कन्हैया।

विदुर का घर, दूर नहीं है,
पाकी भाजी न त्यागो कन्हैया। - ४

पंच प्राण एकमन पांडव को,
अनाथ समझ लिये बैरी कन्हैया।

शत-कुरुवंश विनाश करो,
बनो अर्जुन रथ-सारथी कन्हैया। - ५

रण भूमि बीच विज्ञान सुनादो,

धीरज सौरज वर दो कन्हैया।

आपद हरण नेता आ-पद नेता बनो,
पद भक्ति दो वर दो कन्हैया । - ६

टिप्पणी :-

त्रिभुवनेश्वर त्रिनयन रिपु मान मथन वपु	-	शिवजी के रिपु कंदर्पका अभिमान को मथन करने वाला सुन्दर शरीर
आपद	-	विपत्ति
आ-पद	-	पद पर्यन्त
दो वर	-	१-पदपर्यन्त ले जाओ, २- पद भक्ति दे दो

प्रार्थना देवी की

मैया मेरी !

तड़प रहा शिशु तेरे,
उठा लो अंकमें मानो अपना,
भूल जाओ दोष सारे - टेक

भली बुरी बुद्धीनहीं, अबोध हूँ,
जो कुछ करम है मेरे,
रीति यही चली आयी जगत में,
जननी के सब प्यारे।-१

विविधोपचार पूजन विधान,
न जाऊँ जप तप धोरे,
भक्ति ज्ञान नहीं योग साधन,
कैसे ध्यान धरूँ तेरे।-२

नाम रूप-क्रिया गुणातीत हो,
अज हरि हर सब हारे,
लीला तेरी सो जाने लीलामयी,
जा पर कृपा तुम्हारे । - ३

हाथ पकड़कर ले लो सुपथ में,
कारज करो इक मेरे,
ममता बंधन खोलो संसार-सागर,
उतारो किनारे ।-४

जानत हूँ जननी हिय कोमल,
नवनीत से नहीं न्यारे,
कोटि धरासम क्षमा, सहन में,
दयामयी मा मेरे। -५

शरण रखो मा दुष्ट समझ कर,
त्याग दो मत दूरे,
धरम टूटेगा जगत हँसेगा,
नाश जाऊँगा अचिरे ।-६

अरुणोदय में शरण हीन हो,
जैसे तेज हीन तारे,
यथा कमल बन बिलीन शिशिर में
गिरि नदी निदाघ निहारे ।-७

निदाघ से शिशिर, शिशिर से निदाघ,
रहते जैसे अतिदूरे,
तैसे कामादि-रिपु अर्क पादप,
दया पावस हो तेरे ।-८

अभय पय पिला दो तनय को,
काँपे भव भय मारे,
पुत्र कुपुत्र हो, माता न कुमाता,
रखो बिनती इकमोरे । - ९

भुवन भुवन, बन जा बनजात तु
वनज ! पत्र मैं तेरे,
सलिल संग असंग रहूँ,
रंग जाऊँ पराग से तेरे ।-१०

टिप्पणी :-

निदाघ	-	ग्रीष्म ऋतु
वनजात	-	कमल
अर्क	-	आक का पेड़
भुवन	-	जल
वनज	-	कमल
भुवन	-	संसार

प्रार्थना

विसर गये क्यों बिछुड़े हुये को,
भटक रही हिरणी भव वन में।

अति प्रबल क्रोध दावानल,
फैल गया है चउदिश में।

काम किरात कमाण बाण हाथ,
ताक रहा है तरु उहाड़ में।

लोभ-किरातिनी विछागई है,
ममता जाल इस बिच बिच में।

माया-कुहुकिनी जादु डार गई, दुश्य पलट गई महा-मोह में।

बचाओ बचाओ बचालो साथी,
छोड़ गये कहाँ दिशांतर में।

दया वारिद ! वारि बरषाओ,
असहाय अरि तरसाओ पल में।

साथ तड़ित चमकाओ ज्ञान के,
विराग चड़क पड़े महा बन में।

कठोर किरात को डस जाओ अब,
मनन उरगभेजके इस क्षण में।

नाथ अनाथ न तज जाओ,
विरही हिरणी पुकार रही भव वन में।

टिप्पणी :-

भव-वन - संसार अरण्य

निर्झरिणी

किरात	-	व्याघ
कमाण-बाण	-	धनुष बाण
साथी	-	भगवान
दयावारिद	-	भगवान
तडित	-	बिजली
मनन उरग	-	बिचार रुपी सर्प
हिरणी	-	जीव
माया-कुहुकिनी	-	मायारुपी जादुगरनी

प्रणत पाल ।

प्रणाम करूँ कैसे ?

प्रणत पाल प्रणाम करूँ कैसे ?

भय हर-हर ! मेरे हिय भरे भय में,

चित्त संकुचित लता लाजवन्ति जैसे - टेक ।

वास कंटक में उलझ गया है,

बिनु सुलझे प्रणाम करूँ कैसे ?

रज्जुमेंभुजंगम दिख रहा है,

भयभीत प्रणाम करूँ कैसे ?

तेरा, 'मेरा' में झगड़ा पड़ा है,

बिनु मिटे प्रणाम करूँ कैसे ?

उभय बिधि पय तोय में समाया,

विषम बिधि प्रणाम करूँ कैसे ?

हिरण कानन भटक रहा है,

मृगमद बिनु, प्रणाम करूँ कैसे ?

मोह-राहु ग्रसित चित्त चंद्र,

तमसावृत प्रणाम करूँ कैसे ?

किया न प्रणाम, पाया परिणाम,

लिया जनम, अनुमान है ऐसे।

शशी शीश आशीष अमोघ है,

पुनः प्रणाम कर अन्त नमन से।

यावत् नाम रूप विलग हो,
प्रणाम करूँ नित प्रण है ऐसे।

तज दो अपना हठ देवेश्वर !
बाल हठ पूरण हो जैसे।

जादुगर डमरुधर शंकर !
डमरु बजा दो एकवार ऐसे।

जाय निपट सब गोरख धंदा,
मिट जावे सब समस्या जड़ से।
प्रणत पाल प्रणाम करूँ कैसे ?

टिप्पणी :-

उभय विधि	-	पय तोय में समाया,
१-पय	-	मन,
तोय	-	संसार
२-पय	-	मन,
तोय	-	परमात्मा दोनों विधि से मन का अस्तित्व लोप होने से विषम परिस्थिति वशतः नमस्कार करना असंभव हो रहा है।
गोरख धंदा	-	संसार

स्वागत गीत

प्रेम कुंज में आनंद बल्ली
अध पली तव स्वागत में
अध खिली है कुसुमकली
कुसुमाकर के स्वागत में। - १

अध लिखी है जीवन गीती
जीवनाधार तब स्वागत है
अध लिखा है चित्र तव
कलाकार तुम्हें स्वागत है।- २

अध बने मन मंदिर छूटा
अध गढे सिंहासन भी
अध गढ़ेकलस छूटा
विश्वकर्मा तव स्वागत है।- ३

अध खुली है कारा ताली
कुंजीका तुम्हे स्वागत है
अधनिकली नाराच निषंग से
धनुष घर का स्वागत है।-४

अध चढ़ा है पाल नाव में
नाविक तुम्हे स्वागत है
अध खेला है ये कठपुतली
सूत्रधर के स्वागत है। -५

मानव जीवन में है अधुरा
इकवार तुमसे मिले बिना
सुहागिनी विरह विधुरा
प्राण बल्लभ तुम्हें स्वागत है।-६

सबका स्वागत अवगत हो

सर्वगत अनंत तुम्हे
पूरण करदो सबकी आशा
वर दे दो परिपूरण हमें।-७

परम पिता परमेश्वर का नाम
गंग धारा बहते चले
परम लक्ष सिंधु वक्ष स्थल में
अथक चले सानंद मिले।-८

टिप्पणी :-

कुसुमाकर	-	वसंत
कलाकार	-	भगवान
नाराच	-	तीर
कुंजीका	-	कुंजी, भगवान
कारा	-	कारागार 'संसार'
अध पत्नी	-	आधा पालन किया गया है
जीवनाधार	-	भगवान
विश्वकर्मा	-	भगवान
निषंग	-	तुणीर

नीच की ऊचाई

मैं तो पदरज रंग रंग जाऊं रे !
रज संग इक रंग एक जीवन ढंग
प्रभु पद तल मिल जाऊं ॥

जंजाल जग के, भय रिपुओं के चिंता शोक विसराऊं।
सबसे नीच मैं, रग रग बीच मैं, आनंद बजार बसाऊं ॥

प्रभु जाएंगे वन, वनमें फिरेंगे, मैं पादुका बन जाऊं।
भक्त भरत के, सिर पर आसीन, सिंहासन पर भाऊं ॥

वशीभूत बासब, बीर बली के, सिर ताज पर शोहूँ।
विभु वामन के, चरण रज हूँ, नीच की ऊँचाई दिखाऊँ ॥

बन जाऊं पदरज द्बीज भृगुके, प्रभु हृद जा वस जाऊँ
धरेंगे प्रभु मुझे, हृदय कमल बीच, युग युग आनंद गीत गाऊँ ॥

'अणोरणीयान महतो महियान' नीति बिसम बतलाऊँ ।
प्रभु पद रज को जुहार जन्म भर बार-बार बली जाऊँ ॥

मैं तो पद रज रंग-रंग जाऊं रे॥

टिप्पणी :-

बासव - इन्द्र

तव और अब की पुकार

सुरासुर यक्ष रक्ष मिल मथे क्षीर सागर,
निकला विश्व विध्वंशक हलाहल भयंकर।

भय-भीत भुवनजनों के भय भंग कर,
पिये पियुष सम विष विषकंठ दयाकर।
हे विश्वेश्वर निराधार निराकार !
तब सुने थे तुम भीत जन के पुकार ॥

सुरासुर बन गए आज नितिहीन नेतागण
पयोनिधि मथ रहे क्षुब्ध भारत के जन-मन।

नाग-राजनीति-मुख निसृत ये विष पान करो,
अशांति को शांत अवके पुकार सुन।

हे विश्वेश्वर निराधार निराकार !
तब सुने थे, अब सुनो भीत जन के पुकार ॥

विश्व विजयी मत कंदर्पक दर्पहर, बशी !
भस्मी भूत कियो उदण्डों के दण्डधर।

दर्पीदक्ष मख किया सुरु बहु आडम्बर
विमुख था तुमसे फल दियो सही विश्वम्भर।
हे विश्वेश्वर निराधार निराकार !
तब सुने थे तुम रति, सती के पुकार ॥

कुछ स्वार्थी कामदेव के अनुयायी आज
पहने हैं गहने धर्म के बहु साज ।

मुख मोड़ के तुमसे मचा रखे हैं हलचल तेज
सदबुद्धीदो सबको हे सदय ! विश्वराज ।
हे विश्वेश्वर निराधार निराकार !

तब सुने थे, अब सुनो समय के पुकार ॥

आज भारत के जन, भारती रत, कार्यरत नहीं,
सागर पार जाना सबको, सागर पार जाना नहीं।

हिन्दु मुसलिम भाई-भाई घर में फूट सही
धर्म ध्वज लेना कर में कुछ करना नहीं।

हैं विश्वेश्वर निराधार निराकार !
तब सुने थे पुकार, आज कर दो रामराज्य साकार।

यही है प्रभो अबके समय के पुकार ॥

टिप्पणी :-

मख	-	यज्ञ
भारतीरत	-	केवल बोलना
जाना	-	चलना
जाना	-	जानना

मिट्टी के सपूत

मिट्टी से तू जन्म लिया,
मिट्टीमें ही रहना,
मिट्टी से ही खाना पीना,
मिट्टीमें तो सोना,
मिट्टी से ही पला पोषा,
मिट्टीमें ही मिलना,
तो क्या यह जिन्दगी को,
मिट्टीही बना देना !

कुम्हार ने ठोक ठोक कर,
घड़ा बनाया कच्चा है,
मिट्टीका मूर्त है जो,
शरीर इसका कच्चा है,
अंदर कोई है पहचान,
हमेशा जो सच्चा है,
तपा तपा कर फिर इसे,
क्यों न करना पक्का है !

मिट्टीतेरी माआ है, तु
बच्चा है इस मिट्टी का,
माँ को नहीं पहचाना तो,
जिंदगी किस काम का,
मिट्टीसे ही सोना बना,
हीरा मोती छिपा है,
पानी से यह जनम लिया,
पानी में हरि छिपा है।

जल पुत्री यह मिट्टीका,
नमक तूने खाया है,

नमक सच्चा जो नहीं बना,
सब कुछ वह खोया है,
एक गले में फूलों की माला,
एक को काँटा चूभा है,
शिर पकड़ कर रोने से क्या ?
जो बोया सो पाया है।

उठ रे ओ मिट्टी के सपूत !
समय पर कुछ करना है,
इसी मिट्टीसे फल फूल,
फिर हीरा मोती उगाना है,
कच्चे घड़े को जला जलाकर,
जल के बीच डालना है,
हरि मिलेंगे दुःख हरेंगे,
जीवन सफल बनाना है।

उठरे ओ मिट्टी के सपूत !
समय पर कुछ करना है
दुर्लभ इस मानव जन्म को,
मिट्टी न बना देना है।

विनु वरषे मत जा

मत जा मत जा बारिद !

बिनु बरषे मत जाआ

निरस निराशा निदाघ बिता है,
धरा प्राण आतुर पिआसा है,
धारा से प्यास मिटाजा मिटाजा,
बिनु बरषे मत जाआ ..

पुण्य - पावस ऋतु नियराया,
गुरु - घन गगन - जीवन पर छाया,
आशा - चपला चमका जाआ,
बिनु बरषे मत जाआ ..

चातक - बन्धु है ! चातक आशा,
चातक तन मन प्राण उदासा,
बिघ्न बात्या उड़ाजा उड़ाजा,
बिनु बरषे मत जाआ

तरुवर मरु में आतुर तरसे रे,
वारिधर वारिधि पर बरषे रे,
जग उपहासी न बना जा बना जा.
बिनु बरषे मत जाआ.....

गुरु वर - वारिद दरश दिखायो,
-मोर मोरे हरष नचायो,
कृपा - बारि वरषा जाआ,
बिनु बरषे मत जाआ..

वारिद । बिनु बरषे मत जाआ।।

टिप्पणी :-

निदाघ	-	ग्रीष्म ऋतु
पावस	-	वर्षा ऋतु
चातक बन्धु	-	मेघ
वारिधर	-	मेघ
वारिधि	-	समुद्र

महात्मा का मन

लहरों से लहरें टकराते हैं क्यों ?

बुदबुदें अरबों बन जाते हैं क्यों ?

बनकर फिर बिगड़ती रहती हैं क्यों ?

महासागर का तो स्वभाव ही यों।

चाहें झड़ झंझायें झक झोर जावे

चाहें घन घटायें उमड़ घुमड़ आवे ।

महार्णवको है न सुख न दुःख

सलिल-साक्षी सलील प्रशान्त मुख !

महा मानव का है ऐसा ही मन

उर्मिल चिदानन्द सागर सुजान।

टिप्पणी :-

सलील - लीला के साथ

सलिल - जल

उर्मिल - तरंगपूर्ण

अब तू चला, मैं तो चला

साथियों ने कहा यह घर तेरा, उनकी बात मैं मान ली,
इस घर के तुम हो मालिक उनको अपना मान ली,
ममता की गाँठ कसके मारी, दो दिन सबने साथ दिया,
मालिक मैं हूँ, मन चाहा किया, सबने भी वाह वाह किया।

एक दिन राज नगर से दूत, श्वेत पत्र एक दे गया,
कर चुकाओ बहुत बकाया, आज तक तूने क्या किया ?
जन्म के साथियों से पूछा, अब सब जबाब देने लगे,
इसके बीच नगर से दूत, कई बार फिर आने लगे।

सिर धुन धुन कर घूमते फिरा, मिले नगर सेठ संयोग से,
रोया तो ढाँढसबंधाया, नाम बताया, मिलो मालिक से
घर लौटा देखा क्या अचरज, मालिक बैठा है घर के अंदर,
आवाज आई नहीं रहते हैं, दो सेर एक गुफा के भीतर।

होश आया अब सोचने लगा, मालिक तुझे बनाया कौन ?
नजर फिराई पूछा सबसे, सर झुकाये साथी खड़े है मौन
समझ आया साथी नहीं थे, डाकू लुटेरें, ठग थे सारे
ममता की गाँठ खुल गई, अब रह गया 'मैं' एक किनारे।

संभलकर तब मालिक से बोला, माफ करो कर, मैं दिवाला
जहाँ देखता तू ही तू है, अब तू चला, मैं तो चला,
जैसे भी हूँ जहाँ भी हूँ, सरबदा मैं रहूँ तुम्हारा ॥

रघुवर ! पुकार क्यों नहीं सुनते हो ?

रघुवर ! पुकार क्यों नहीं सुनते हो ?

पथ कि पत्थर नहीं हूँ, आतुर हूँ, राह का रतना को तो तारते हो ना !

दुःखिनी हरिणी, गज, नभचर, निशाचर, सबका आरत सुनते हो।

केहि लेख में मोहि लिखते ? रघुवर ! पुकार क्यों नहीं सुनते हो ?

प्यारा पक्षीको अंकमें सुलाए, सिधे निज धाम भेजते हो

केवट बिचारा जप तप क्या किया देव दुर्लभ पद दिलाते हो।

केहि लेख में..... रघुवर !.....

कुटिला कैकेई, कुबजा, शबरी, गणिका सबको अपनाते हो

शाखामृग, हेममृग, श्रुतिनिंदक रक्ष शरणागत सब रखते हो।

केहि लेख में..... रघुवर !.....

पूछता हूँ प्रभु केहि न तारे, एक नाम तो उचारते

दास नाम हरि ! रसना पट से 'पट्ट पातकी' क्यों न बोलते हो ?

केहि लेख में..... रघुवर !.

ये सब के सब अघ, तराजु भर एक बार क्यों न तोलते हो

देखो पल्ला है भारी मेरी, क्यों नहीं पल्ले छुड़ाते हो ?

केहि लेख में..... रघुवर !.

माँगुन, माँगु दोनों विषम है दोनों से एक दो माँगता हूँ

'नीच पापी' कह पद प्रहार करो, यही अंत गति याचता हूँ।

केहि लेख में..... रघुवर ! पुकार क्यों नहीं सुनते हो ?

टिप्पणी :-

रतना - रत्नाकर दस्यू

शाखा मृग - बंदर

पटपातकी	-	श्रेष्ठ पापी
प्यारा पक्षी	-	जटायु
रसना पट	-	जिह्वा

आर-पार की लड़ाई

आज मेरे साथ प्रभु! आर पार की लड़ाई लड़लो !

मेरी विजय निश्चित; तुम, तो हार मान लो।

उभय पक्ष के बीच जरा रथ को रोक लो

अवयव के बल पौरुष जरा कलना कर लो।

तुम तो एक हो, निरवयव असहाय

वेद कहे निर्गुण हो, निरंकुश निरुपाय।

मैं भी निर्गुणी हूँ, महारथी सेनापति

काम क्रोधादि छे हैं, संग असंख्य रथी।

काम अकेले त्रिभुवन स्ववश मैं किया है

महावीरों को भी निज पद धूल चटाया है।

क्रोध, लोभ आदि को बल महामाया ने दिया है।

विश्व विजयी ये हैं सब, बिचारक गुण गाया है।

विश्व विख्यात कामी क्रोधी मैं महा लोलूप

अनंत आसुरी संपत्त, साथ भयंकर रूप।

ये तो संक्षेप मैं हैं, विस्तार का नहीं अंत।

कैसे जीतोगे रण, देखते ही हो भय भीत

सेना से मुझे अलग पल भर न कर पाये

लड़ाई लड़ोगे क्या ? पहले ही तुम हार गये

सूरदास से हाथ छुड़ालिये थे ना, आखिर गति क्या हुआ?

आगे पीछे घूमते फिरे, भावग्राही रूप प्रगट हुआ।

सारे रण हारे हैं तुम, जीत एक भी दर्ज नहीं

आज भी हार गए तो, यही तुम्हारी जीत सही।

हारना व्यसन तुम्हारा, भीष्म है प्रमाण अनूप
भागकर जाओगे कहाँ बोलो रणछोड़ भूप ?

सागर सम अश्रुजल मेरे, यहीं द्वारिकाबसा लो
जीत में जीत है मेरी तुम हारमें जीत मान लो।

आज तो मेरे साथ प्रभु आर पार की लड़ाई लड़लो।

टिप्पणी :-

अवयव	-	अंग-सैन्य
निरवयव	-	अंगहीन-निराकार
असहाय	-	सहायक बीना
अनूप	-	उपमा रहित
निरंकुश	-	अंकुश रहित, स्वतंत्र

इस पार और उस पार

घन वन भव संसार में भटक रहा हूँ असहारा
अकेला, साथ नहीं कोई पथ हरा हूँ मोह-अंधिआरा।

चउदिश चिंतानल धधके देख-देख भय से दिल धड़के
कहीं बीच घनेरे झाड़ों के डेरा कामादि लूटेरों के।

भयंकर करी सिंह शार्दूल अगणित उरग वन शूकर
कुमति यह रूप लिये बैठी सदा झपटने को तैयार।

ममता गहवरगहरे हैं कुटिलता कुजा कंटक झाड़ी
जाऊँ तो जाऊँगा कहाँ हृद-तरु में है पतझड़ी।

करुणा अरुण किरण कण करुणा सागर के आ पड़ी
मोह तमसा मिटता रहा खिल रही कली आशा की बड़ी।

देखो यह भूधर सुन्दर माया की रचना भ्रमकारी
कनक किरण आभा शोभित यह शैल शिखर है मनोहारि ।

शिखर ऊपर आसीन ओ मेरे आशा-कुसुम उत्फुल्लकारी
दीन दयाल दया करके गुरुदेव बतादो संकटहारी।

वह मग, जग अरण्य उद्धारकारी तव अनघ चरण रज अघहारी
भवभय भंजन कारी नाम-रज्जु चिंता शोक मोह अंतकारी।

मेरे हाथ सहारा नाम रज्जु भव रोग उरग मिटाने वाली
गुरु अभय चरण शिखर पहुँचा परपारकी झांकी झलक मिली।

मुक्ता सिकता शुचिमणि रंजित सागर वेला की मनोरमा
अनंत अपार क्षीरोदधी में शेष तल्प नीलोत्पलोपमा।

बैजयन्ती मुक्ता मणिमाला शोभमान वक्ष श्रीवत्सांकित
पीत वसन वनमाला सोहे अभिनव जलधर सम सुकांत ।

केकी पुच्छ किरीट चतुर्भुज शंख चक्र गदा पद्मसज्जित
क्षीरोदधीतनया चापे चरण अति भक्तिमती मति एकाग्रत ।

फणिमणि मणिफण छत्रसम मुकुन्द सानन्द युत ईषत हास
श्वेत तोयद गंभीर गरजे बरसे मुक्ति पियुषरस ।

भव भव भव्य विबुध विविध ऋषि मुनि वेद पुराण गण
चउदिश हर्ष दिव्य पुष्प वरषे महिमा गान रत आनंद मन ।

वह छबील छबी की झलके झलक जब मन कभी समाहित हो जावे
आनंद अनोखा रोमांच भर नयन नीर तब थलकावे ।

गुरु आशीष सीस धरी जा मिलूँ बनके एक बूंद महासिंधुसे
जहाँ से फिर कभी फिरते न कोई टकराऊँ जाके उन लहरों से।

टिप्पणी :-

शार्दूल	-	बाघ
उरग	-	सर्प
सिकता	-	रेत
तल्प	-	शया
केकी	-	मोर
क्षीरोदधी तनया	-	लक्ष्मी
फणि	-	सर्प
तोयद	-	मेघ
पियुष	-	अमृत
भव	-	ब्रह्मा
भव	-	शिव
भव्य	-	सुन्दर
विबुध	-	देवता

वसंत के स्वागत

आओ वसंत स्वागत मतवाले !

ऋतु राज के रूप, भोगी प्रमोदरूप,

आनन्द साम्राज्य भूप मेरे दिलवाले ! आओ बसन्त...

विताड़ित शिशिर, मंद मलय समीर, आरोही रथ सुन्दर

विहरने वाले ! आओ ..

पंच भूत उल्लास, सुमन सुमन-वेशकारी आनन्द रस

बरसाने वाले ! आओ ..

नव पल्लव वसन, उत्फुल्ल फूल वदन, ऋतुमती धरावक्ष-

चूम्बीमतवाले ! आओ.

मधुमत्त मधुप, लतावेष्टित विटप जलकेलीरत द्वीप

नचा देने वाले ! आओ

रगरग में तरंग, अंग-अंग में उमंग, कुसुम कुल में रंग

समा देने वाले ! आओ

तव सखी शारदा, वीणा नादसे सदा, जीवन गीत में राग

जमा देने वाले ! आओ

रंग विरंगी होली, जन मन दीवाली, आनंद वेहाली धारा

बहादेने वाले ! आओ

किन्तु बिरह विधुर मिलन चिंता कातर, अंतरतम से दूर

तरसाने वाले ! आओ

विहरने वाले ! रस वरसाने वाले !

नचादेने वाले ! स्वर लहराने वाले !

समादेने वाले ! राग जमादेने वाले !

बहा देने वाले ! किन्तु तरसाने वाले !

मेरे दिलवाले ! आओ.

टिप्पणी :-

विटप	-	वृक्ष
पल्लव	-	कौपलें
मधुप	-	भ्रमर
द्वीप	-	हाथी

भजन

घनीभूत चिदानन्द रस कृष्ण बोलो
संसार के माया जाल ग्रंथी सब खोलो रे
जीवन ये कृष्ण लीला समझ के खेलो
आनंद की बांसुरी मस्ती से बजा लो रे।

सपना सारी उमर देखते ही चलो
एक भी सच्चा नहीं बचके निकलो रे
जीन्दगी लम्बा सफर, धीरे से गुजार लो
साथी पल के सब सदा के न मान लो रे।

जादु नगरी यह संसार, है हाथ की सफाई
जादुगर यह मन है भाई देखे न कोई रे
शरीर जो साथ आया साथ न ले लो
स्मशान चिता ऊपर इसको तो छोड़ लो रे।

जग जंजाल यदुवाल के ये चाल
नाम अनल से ये जाल को जला लो रे
कृष्ण-कृष्ण राधे कृष्ण कृष्ण कृष्ण बोलो
पाप ताप सारे जले, हाथ को तो सेक लो रे।

टिप्पणी :-

यदुवाल	-	श्रीकृष्ण,
नाम अनल	-	भगवत् नामरूपी-अग्नि

राधा विलाप

सखि ! आज श्याम सुन्दर सुधि आये
चंचलचित्त उचाट भये जा के चंचल चरण समाये-टेक।

यमुना किनारे कुंज कानन में श्याम जब बंशी बजाये
मती-युवती को जनमा जगमें धुन सुन मुरुछा न जाये। -१

चंदन चर्चित श्याम कलेवर उपमा मनको सुहाये
यमुना जल में रविकिरण युत तमाल बिंब लहराये। -२

अथवा नील गगन से गंगा शिवजटामें उतराये
फेन गण गुणित तारा बनके चंदन रुचि अपनाये।- ३

डोले श्याम सुन्दर कनक कुंडल पर कुंचित केश लहराये
मानो कमल पर अगणित अलिकुल एक साथ मंडराये।-४

सुमेरु शिखर पर कनक किरण जाल जब कभी जगमगाये
मुकुता खचित शोभा मोर मुकुट की ऐसी मनको लुभाये।-५

कृष्ण कुंतल-नील निरद में नीलकंठ पुच्छ शोहे
पुरन्दर धनु श्वेत महल में श्याम रंग रंग जाये।-६

कस्तुरी तिलक अलिक पर बोले अनंग तू अंगहीन होवे
चपल नयन देखि दुःखी चपला पल में चपलता खोवे।-७

भ्रु-ललित लता देखि लवंगलता लाजवंती सी लजाये
भ्रु-धनुष धर चंचल चितवन-बाण काम बरषाये।-८

नाकशिरी नाक शिरी को धीकधीकारे गंड नागशिरी सोहे
ललामअधरकी लालिमा मधुरता सारी लालिमा चुरा लाये।-९

ता पर बसे सछिद्र मुरली सखि मोही से सही न जाये
विरह बिधुरा मेरा अंतर ज्वाला ज्वालामुखी बन जाये।-१०

पंचम तान मोहन मुरली की मोहिनी मंत्र चलाये
जलचर, थलचर, नभचर सब निज करम धरम विसराये।-११

सुमन वनजात विधाता निजहाथ अंग अंग सजाये
श्यामल तनु पिताम्बर शोभा मनको चूपके चूराये। १२

अमल कमल दल पद पराग लोभी चित चंचरिक बुलाये
मधुमत्त मधुप नुपूर रुपले मस्त गुंजार सुनाये। १३

सखि ! वह दिन आयेगा कब जब स्वप्न तरु फल जाये
श्याम मन मानस-मराल बन तन वर्ण सफल मनाये।- १४
रमा वदन बिधु-चकोर-विधुवदन-चकोर चित बन जाये
मन कुमुद मेरे श्याम कुमुद बंधु- मुख निरखि हरषाये। १५

वासन्ती कुसुम-सुकुमारी राधा बिलाप विरह जगावे
राधा प्रेम रथ चढ़ी चंचल चित श्याम सहसा चली आये।-१६

टिप्पणी :-

चंचल चरण	-	कृष्ण पद
युत	-	युक्त
नीलकंठ	-	मोर
श्वेत महल	-	राधा महल
सुमन वनजात	-	वन्य पुष्प
मराल	-	हंस
वर्ण	-	रंग
रमा	-	लक्ष्मी
विधु	-	चन्द्रमा
कुमुद	-	कुई फूल

प्रेम की प्याला

आज तो प्रेम की प्याला भरके पियेंगे।
मन मतवाले होके जम के नाचेंगे पियेंगे। -१

जो भी आयेगा यहाँ उसे पिलायेंगे।
दुनिया से जुदा आंगन में झूमेंगे पियेंगे।-२

तन मन धन को सब साथ लुटायेंगे।
प्रियतम से दूजा न नजर लगायेंगे पियेंगे। - ३

एक साथ दुनिआदारी आग लगायेंगे।
जलेगी दुनिया सारी राख रमायेंगे पियेंगे। -४

रंग भर एक संग राग जमायेंगे।
एक रंग एक संग राग जमायेंगे पियेंगे। -५

पिओ पिओ भरके पिआला पिया ही रहेंगे।
तू-तू मैं-मैं फुर्र उड़ जायेंगे पियेंगे।- ६

आज तो प्रेम की प्याला भरके पियेंगे।
मन मतवाले होके जम के नाचेंगे पियेंगे। - ७

श्याम सुधारस भर के पियेंगे।
राधे-राधे श्याम-श्याम दिल से गायेंगे पियेंगे। -८

किशलय

किशलय ! तु परानंद का परम आलय ! - टेक ।

मृदुल सुकोमल उज्ज्वल सुविमल प्रफुल्ल तू सर्वगुण निलय
तू तरु स्वप्न सुषुप्तिका अंत में जाग्रत करे अभ्युदय।-१

तू तरुका शोभा प्रभा प्रकटित तू आनंद उत्सका उदय
तू वृक्षराज का मनोहर मुकुट सीकरकण-हीरामोति कमनीय। - २

तू भावि फल प्रथम सोपान, तुझ में सूप्त कली कुसुम निचय
तू उपवन का मनोरम छट्टा, तू बुलाये बात मंद मलय।- ३

तू ऋतुराज अधर, समय चरण, तू है मनसीज-हृदय
सरल सुन्दरता की सुन्दर मुखरता, तू सरलता का स्पष्ट परिचय।-४

आशाओं का प्रथम विकाश, लक्षप्राप्ति तू करे निश्चय
पुरातन का विस्मृति पर तू नविनता का पुनः अभिनय। - ५

धरा पर जीवन प्रवाह का तू प्रवाहक, तू है सहाय
आनंद सरिता श्रोत, चिरानंदस्पन्दन, तू सदा आनंदमय। - ६

जगमोहन चित्तचोर-चित्तचोर तू तेरे शोभा मोहित हुयेनंदतनय
श्याम सुन्दर की चरण उपमा तू, जहाँ चराचर उपमा का विलय।-७

किशलय ! तू परानंद का परम आलय ।।

टिप्पणी :-

किशलय	-	कौपलें
आलय	-	घर
अभ्युदय	-	प्रकट करना
सीकर	-	ओस

निलय	-	समुह
परानन्द	-	परम आनन्द
निलय	-	घर
उत्स	-	झरना
कमनीय	-	सुन्दर
मनसीज	-	कामदेव

मिलन आवाहन 'कृष्ण का'

यमुना किनारे, बंशी पुकारे, आज मिलन को प्यारे
श्यामल तन ये, तमाल वन ये, राधे! बल्ली-तन मेरे - टेक।

सरगम स्वर में अधर स्फुरण में बन जा संगीत तू रे।
मंद मराल गति पायल झंकार ताल जमा दे सधीरे। - १

पागल मुरली मादक मद भर मीठी तान सुनाये।
बिनु कुमुद बंधु कैसे कुमुदिनी प्रेमालाप जगाये। - २

मालती मधुमति गंधराज भी बिनु सुगंध लहराये।
राधा-भाव बिनु भगति-श्याम आज विलग पल न रहपाये। - ३

शरद पूर्णिमा, निर्मल यमुना, कलकल जल ये सुनाये।
मधुर मिलन हो आज हमारा प्रिये! प्राण पुकारे।-४

प्रिये! वृषभानु दुलारे।
आज मिलन को प्यारे ।।

टिप्पणी :-

वल्लीतन	-	लतारूपी शरीर
मराल	-	हँस
कुमुद बन्धु	-	चन्द्रमा
कुमुदिनी	-	कुई
मधुमति	-	मधुमालती नामक फूल

मिलन आवाहन 'राधा की'

प्रियतम ! आओ सदन हमारे।

अकेली हूँ, संग सखि न कोई, राह निहारूँ तुम्हारे-टेक ।

सुमन बनके, वन सुमन से सेज सजाई पिआरे।

मति-मल्ली की माला वनाई हूँ, गले की देरी तुम्हारे ॥

गले की पिआसी करमाला मेरी, मिलादो नयन गुलजारे।

बिनु रंग रंग दो रंग महल ये आओ खुले हैं दुआरे ॥

रंग से रंग भर दो अंग से अंग अनंगतात मतवारे ।

राधा विलाप आलाप करि हरि रंग महल सिधारे ॥

टिप्पणी :-

सदन	-	घर
करमाला	-	हाथ से बनाई गई माला, हाथ रूपी माला
अनंग तात	-	कामदेव के पिता-श्रीकृष्ण

विरहिणी राधा

कुंजवन में मुरली बाजे रे।

मोहित हुआ जगत, राधा मन मज्जे रे-टेक

दुःखिता भीता शंकिता, चपला चपला चित्ता,

शृंगार अव्यवस्थिता बिरहिणी सजे रे।

वसन व्यसन सीमा, श्यामल तन गरिमा,

पीताम्बर मनोरमा ध्यायी तन साजे रे ॥ - १

उज्जवल मीन नयना, काजल लिये भावना,

मकर कुण्डल हेम कर्णफूल साजे रे।

कुन्तल बिच सिमंत भरे काजल तुरंत,

काजली मुख मंडल तिलक बिराजे रे ॥ - २

सोची 'गोपाल लोचन' करे धरी गोलोचन,

'पाल' 'काजल' मिलाये तुलीकासे छाजे रे।

चूड़ी तोड़ी कणकण कर पहरी कंकण,

मदन बाण प्रहार कारण क्यौं रंजे रे ॥ - ३

मेखला-कटी वसन अलक्त करे लेपन,

सर्वांगपीत सुमन साजे ताजे ताजे रे।

हरिद्रा संग चंदन मानी पीतांगवसन,

अधांग लेपने मन, घघरीआ भीजे रे ॥ - ४

उरज बिच चंदन आंकती चरण चिन्ह,

बोलती मैं हूँ कान्ह श्रीवत्स ये राजे रे ।

मयूर पूच्छ अनेक सजाई सेज रम्यक,

शेष अशेष मस्तक मानी बिच बिराजे रे ॥ - ५

देखी सखी माथे मणी, सोची ये कालीय फणी,

चरण प्रहार करी, गंभीर गरजे रे।
बांध ली पद घुंगुर मुरली ताल से धीर,
नाचती झुमक झुम, रुण झुण गुंजे रे ॥-६

कर धरती उरजे, चरण चिन्ह बिराजे,
सोचती लातताड़ित श्याम मोही तजे रे।
बृषभानु दुलारी, विरह-दाह-बावरी,
बिलपंती बिलसती, कृष्ण भावे मज्जे रे ॥-७

देखी सहेली बाजुके नीलम मणि दमके,
बाहुबंध में बाँधके श्याम रंग रंजे रे।
बंश खंड करे धरी, बोलती मैं राधा-हरि,
हरि-राधा राधा-हरि बंशी बाजे कुंजे रे ॥-८

कुंज बनमें मुरली बाजे, आज बाजे रे ।

टिप्पणी :-

चपला	-	बिजली
कुन्तल	-	केश
काजली	-	काला
अधांग	-	शरीर की निचली भाग
रम्यक	-	सुन्दर
चपल	-	चंचल
सिमंत	-	स्त्रियों की माँग
मदन	-	कामदेव
उरज	-	स्तन
उरजे	-	स्तन के ऊपर
हेम	-	सुवर्ण
हरिद्रा	-	हलदी

हरि का राधारूप

बिचित्र चित्र ये हरि राधा रूप धरे रे।
जग उचारे माधव, माधव रटे राधैव,
राधा, राधा, राधा राधा सर्वदा सुमरे रे। - टेक

राधा नयन का तारा, मस्तके सजे ये हीरा,
स्फटिक मणि बाजुके जीवन सहारे रे।
वन माला में मल्लीका, जीवन-तरुलतीका
प्राणपिंजर-सारीका, राधानाम तारे रे। - १

मात्र 'रा' मात्रा उचारे, रोमांच सारे सरीरे,
नयन बरषे बारी सुधबुध बिसारे रे।
मोहित जग मोहन, राधा रूप गुण गान,
चित्त श्वेत रंगे रंगे, राधा रूप धरे रे।-२

वेणी गुंथे कुंतल, माला साजे जूही फूल,
पहरे श्रवणे फूल, वेणीफूल धरे रे।
नासामें नथ सजाये, गले मोतिमाला बाहे
बाजुवंद मकरंद अंकित मति हरे रे।-३

करे कनक कंगन, कटि मेखला शोभन,
बुलाये मीनकेतन, रति मद मारे रे।
पाद में बांधे पायल, हीरा मोति झल मल,
हंस-गामिनी-राधिका-चाल चले धीरे रे।-४

सर्वांगे राधा भूषण, राधिका मन भावन,
घुंघट पट वसन, दुतिका संवारे रे।
नयन निरखे राधा, शब्द सब ही राधा,
राधाराम बने श्याम, राधिका उचारे। -५

बिरह विवश अति, दुति दुतिका ले आती,

विविध जाती मालती जाती गंध भरे रे।
कुंकुम श्वेत चंदन, श्वेत लेपन, व्यसन,
साजे श्वेत कलेवर विरहे विहरे रे।-६

मिश्रण अष्ट गंधका, लिखे ललाटे 'राधिका',
राधा'नाम मस्तके, 'सुवल-स्वसा' उदरे रे।
कर्ण 'गोपेन्द्र नंदिनी', भूपरि 'शशिशोभनी',
'कृपादेवी' ओष्ठमें, 'गोपिका' अधरे रे। -७

नासिका में 'हरि प्रिया', जिह्वा में 'श्री कृष्ण प्रिया',
कंठे 'हरि प्राणा' लिखे 'योगान्विता' कमरे-रे।
बाहु में 'चंद्र वदनी', चिबुके 'गोप नन्दिनी',
जानु में 'जया', 'बिजया' लिखे बिच उरे रे।-८

कुक्षि 'श्रीकांत बल्लभा', गुल्फे 'गोपाल वल्लभा',
पृष्ठे 'शुभ प्रदा', लिखे शौभद्रिका पदेरे
पाद तले लिखी 'गोपी', नखे लिखी 'चंद्रमुखी',
'वृषभानुसुता' दंते, 'वाणी'वाणी फूरे रे। - ९

कोकिल कूजने दुःखी,
कीट-भृंग-न्याय पेखी बोले ये वंशी कान्ह के, हृदय विदारे रे।
सखि ! श्याम से मिलादो, विरह दाह मिटादो,
मिलन जलद-सुधारस ज्वाला हरे रे।-१०

निरखी तमालवन, सोचे ये श्याम वदन,
करूंगी मैं आलिंगन, धावे मतवारे रे।
सुनील यमुना जल, परसे मति विहवल,
श्याम तन ए शीतल, काम बाण हरे रे।-११

किशोरी चित विहारी, कुवाँरी भावमाधुरी,
बन के ध्याये मुरारी, भावाभाव परे रे।
विहारी दशा निहारी, दुतिका मिले दुलारी,

बृषभानु बालिका, सुने मति भोरे रे। -१२

हरि दशा राधा दशा, श्यामा श्याम एक दशा,

जो भावे चिंते मनसा, सब दशा हरे रे ।

भाव ग्राही-भावमई-चरण चिंते जो भाई,

अनंत अघ धुलाई चरणे बिहरे रे।-१३

विचित्र चित्र ये हरि राधा रूप धरे रे

जग उचारे माधव,

माधव रटे राधैव राधा राधा राधा राधा सर्वदा सुमरे रे ॥

टिप्पणी :-

कुंतल	-	केश
बेणी फूल	-	फूल के आकार वाला गहना जिस को सिर पर पहनते हैं
मीनकेतन	-	कामदेव
रतिमद	-	कामदेव की पत्नि का गर्व
राधाराम	-	राधामय
अष्टगंध चंदन	-	अगर, तगर, गुगुल, गोलोचन, चंदन, कस्तूरी, केशर, लाल का. मिश्रण जिसमें तंत्र मंत्र आदि लिखा जाता है।
लिखे ललाटे राधिका	-	अष्टगंध से 'राधा कवच' के अन्तर्गत राधा के नामों को अपने शरीर में विभिन्न अंगों में लिखना प्रारंभ करता है।
किशोरी	-	राधा
कुवँरी	-	राधा
कुवँरी भावमाधुरी	-	कृष्ण राधा रूप धारण करके अपना ही रूप ध्यान करता है। बन के ध्याये मुरारी
दशा	-	हालत
दशा	-	दुःख, क्लेश
भावग्राही	-	कृष्ण
भावमयी	-	राधा
अघ	-	पाप

- धुलाई - धोकर के
- चरणों - कृष्ण चरण में

प्रेम डगरियाँ

सबसे न्यारी ये प्रेम डगरियाँ। - टेक

जो कोई आये सबकुछ खोवे हो गये रे बावरीयाँ।
देने को यहाँ सबकुछ होगा बंदकर के नज़रियाँ ॥

न घर तेरा कुटुम्ब परिवारा न कोई सहोदरियाँ।
तेरा तू भी न कह पायेगा धन दौलत बहुत दूरियाँ ॥

इस मारग के जंगल जटिल है, एकरंग हैं तरुलता झाड़ियाँ।
इक रव इक रंग, इक संग, इक ढंग, जीव जन्तु सारि चिड़ियाँ ॥

इस मारग के नदीयाँ गहरी किस्ती केवट न आये नज़रियाँ।
मीठे जल पीने उतरोगे फिसल जाओगे बिच भँवरियाँ ॥

सब डुबे एक आध उबरे, उस पार है प्रेम नगरियाँ।
इस नगरी के बिथियाँ अनेक विपणी में है जाल पिंजरियाँ ॥

प्रेम नगरी के राजा बनना है कर लो सब सरतें पूरियाँ।
छेदन कर निजकर निज शिर धरकर इक साथ चढ़ना चार करीयाँ ॥

सबसे न्यारी ये प्रेम डगरियाँ !

टिप्पणी :-

रव	-	शब्द
बिथि	-	दुकान, बजार
बिपणी	-	दुकान
सरतें	-	सब सर्त
छेदन..... करीयाँ	-	अपने हाथ में, अपना सिर काटकर, अपने हाथ में पकड़कर चार हाथीयों के उपर एक ही साथ सवार होना।

चार करीयाँ - मन, बुद्धी, चित्त, अहंकार

प्रतीक्षा

माली मनमें मान रखा वह शुभदिन, शुभघड़ी आयेगी,
कभी अंकुर में दो पत्ते, दो शाखा, दो कली, दो फूल उसमें खिलेंगे कभी।

पतझड़ के बाद वृक्ष सोचता है, बंसत का शुभागम होगा कभी,
नव किसलय फिर नये कलीयाँ, फलों से अवयव भरेगा कभी।

नीड में पक्षी अंडों को देखती, शिशुके दो पंख उगेंगे कभी,
नील नभ में खुले दिलसे मेरे नन्हे बच्चे उड़ेंगे कभी।

कमलिनी के अंदर बंदी भौरा, सोचता सूर्योदय होगा कभी,
फूल से फूल को उड़ते फिरूँगा, मधु मतवाला फिर हूँगा कभी।

माता के अंक में नवजात शिशु स्तन पान रत, मा सोचती तभी,
शिशु 'शिवा' समय आने से, 'छत्रपति शिवाजी' बनेगा कभी।

जलधि से जल भर लिया जलद, जल, सरिता, नदी बनेगा कभी,
आशा है सरिता मिलेगी कभी, सरिता पति कहलायेगी कभी।

आशा-पति प्रतीक्षा बिना किसी की, आशा फलबती न होगी कभी,
निशा भर प्रतीक्षा के अंत में तो ही, सरोजिनी सूरज देखेगी कभी ।।

टिप्पणी :-

अवयव	-	अंग
किशलय	-	कौपलें
आशापति	-	आशाओं का मालिक-भगवान
निशा भर..	-	निशा का अन्त के लिये
देखेगी कभी अज्ञान		
जीव	-	सरोजिनीको प्रतीक्षा करनी पडती है
तब ज्ञान	-	सूर्य को पा सकेगी।

गुरु चरण चालिसा

दोहा

सद्गुरु पद-पुंडरीक-पराग, चित्त पत्र रंजित रेणु।
जगज्जल अलिप्त रहूँ गुरुदेव, बजाऊँ तव गुण बेणु । - १

भव सागर गुरु नाम नाव, चरण रज कर्णधार।
पार उतारे न देर कछु, श्रद्धा विश्वास पतवार - २

चौपाई

गुरुपद पल्लव करहूँ आराधन, जनम कोटि अघ नासन पावन।
गुरुपद पुष्कर पराग महिमा, मन बुद्धी वाणी अगोचर धामा।-१

गुरु पद महिमा बरनी न जाई, जो ध्यावे कछु पावही सोई।
विष्णु बिरंचि शंकर धरे ध्यान, भवभय हर दुःख शोक नसावन। - २

जा के वाणी जश गावे निरंतर, होवे बिमल बुद्धी मुकुर ता अंतर।
ता-पै परम सत्य परकाशई, जनम जनम जतन फल पावई-३

हृदय कंदर तामस ताप हरई, अरुप-रुप सहज दिख परई।
दुर्लभ नरतनु दुर्लभ विरागा, दुर्लभ सद्गुरु पद अनुरागा।-४

जा पर गुरु कृपा नेहरस बरसे, चिंतामणि पाई दीन जन हरषे।
पदरज अंजन नयन सजावे, रज्जु - सरप भरम मिट जावे। -५

सकल मंत्रसार गुरु चरणा, सकल वेद धरम अनुसरणा।
जप तप व्रत संयम विध नाना, जोग जाग गति नहीं आना। - ६

आर्त जिज्ञासु ज्ञानी अर्थार्थी, चातुर्विध-फलार्थी शरणार्थी।
तापत्रय हारी अंत गति सबके, पद पराग मानसमहूँ जिनके । -७

सकल कामना कल्पतरु दानी, अकारण अनंत दया पयस्विनी।

आनंद सदन चिदानंद कारी, शुभ आकर सब अशुभ निवारी। -८

सर्व देव अर्चन फल पावे, जो गुरुपद-पूजन मन लावे ।

सकल ग्रह अनुग्रह ता ऊपर, ताके मित्र अनुकुल सचराचर।-९

गुरु पद द्वन्द्वरहित गुणातीत, नाम रूप क्रिया रहित भावातीत ।

तत्त्वसार मन बुद्धीअगोचर, तदपि सुलभ अति प्रियतम प्रियकर।-१०

सर्वाधार धाता प्रति पालक, सकल निलय क्षमा दया बलाहक ।

सकल श्री श्रेय विपुल यश दाता, सखा बंधु अति प्रिय पितुमाता - ११

परम ईष्ट गोप्य सदा अनुकूल, परम सत्य जग सेतु सुख मूल।

परम गति, भक्ति, मुक्ति वरद, एक ही सदगुरु के पद संपद । - १२

चिर अखंड ज्ञान-गंग उद्भव, पद गोमुख पावत न पराभव ।

भव रोग भेषज पद रज कणिका, भव-तरु सबल मूल कुठारिका -१३

भव तृण निचय, चरण हुताशन, भव भ्रम समस्या समूल समाधान ।

भव कालीय नाग पद ब्रजेश्वर, भव नाटक नटवर सूत्रधर।-१४

भव दीर्घ स्वप्न साक्षी पद भक्त, जो भवजल उद्भूत पत्र अलिप्त ।

भव-कूप तारक रज्जू-चरण, भव सुदृढ बंधन बिमोचन - १५

भव-विभावरी-अरि-विभावसु, ममता अंध गुरु पद स्वप्रकाशु ।

भव प्रलय कालीन पयोद, प्रबल प्रभंजन पद-अरविन्द -१६

कालकूट बिष हर गुरु चरणा, नीलकंठ सम प्रिय दुःख हरणा।

भव माया जाल चतुर मूषिक, भव क्षुद्रमीन चरण बलाहक । - १७

भवनलिनी वन पद मत्तवारण, शिरिष कुसुम भव पद बज्रदारुण ।

भव हिमकण पद प्रखर रविकिरण, भव उरग, पद उरगारी चरण। - १८

पद दीपक, भव भ्रमत पतंगा, हिरण्य कशिपु भव पद नरसिंहा।

भव कुंजर, पद हरि मदहारी, भव दावाग्नि पद शीतल वारी।- १९

भव मीन केतन, चरण त्रिलोचन, भव विधु विधुन्तुद कंजचरण।
शरणागत वत्सल क्षेम कारी, पद अगस्त्य भव सिंधु सुखारी।- २०

दोहा

स्वयं शारदा शब्द बने, पद रचे बिरंचि सुजान ।
लिखे पद-महिमा, न पावे अंत, अनंत शायी भगवान। - १

गुरु पद रति बिनु ज्ञान नहीं, ज्ञानहीन जीव पाषाण ।
पदकथा बिनु नरतन बिरथा, बिचारी चतुर धरे ध्यान-२

मिटाये न मिटे विधाता लिखन, जनम मरण निज माथ।
गुरु पदाब्ज सबकुछ करे, करम मरम गुरु हाथ।- ३

गुरु अमृत रस धार है, दास जीवन की आश ।
गुरु कृपा नित बरष रही, पातक भये विनाश।-४

सगुरु नवनीत कोमल पद, कमल पराग रेणु लेप।
करो मन-मतवाला-मधुप, गुण-गुंजन आलाप -५

टिप्पणी :-

मुकुर	-	दर्पण
कंदर	-	गुफा
पुंडरीक	-	कमल
बलाहक	-	बादल
बलाहक	-	बगुला
उरगारी	-	गरुड़
विभावरी	-	रात्री
विभावसु	-	सूर्य
प्रभंजन	-	पवन
मीन केतन	-	कामदेव

विधु - चंद्रमा
विधुन्तुद - राहु

दिवाली आई तुम आये नहीं

आई दिवाली,
तुम आये नहीं,
राह देखा,
रहा उदास..

तुम्हारी चिंता में,
चित्त मेरा खो दिया
निज संदेश,
तुम अरु मेरे में,
अब अंतर कहाँ, दोनों हैं एक अशेष ।
अब कोई आना जाना नहीं; द्वन्द्व रहित परमेश ॥

संध्या की मोहक छबी मोहित किया,
कल्पना किया अनेक का एक ।
गंधर्व नगरी यह स्वप्न जगत,
मिटगया कहीं एका एक ॥

अब तो आनंद ही आनंद है,
मिलन विच्छेद का नहीं भेद ।

दीपावली

आई दिवाली दिल खोल के चलो मिलें एक से एक,
एकसे एक यदि मिल जावें तबही तो प्रकाश का रेख ॥

दीप अनेक हैं, आलोक एक, रंग विरंग में रंग एक,
रंग-रंग में जो रमा सो राम, वह ही बना अनेक ॥

प्रकाश का आज विकाश हो, तमसा का हो नाश,
सबके दिल में दीप जले, आनन्द का हो विन्यास ॥

शब्दों से आयात आनन्द, आओ शब्द करें अनुसंधान,
शब्द से तो सृष्टि सृजन है, स्पन्दन का महादान ॥

शब्द से प्रकाश, प्रकाश से शब्द, दोनों में आनन्द समाया,
में शब्द, अरु प्रकाश का विकाश, यही जग जगमगाया ॥

दीपावली की यह आनन्द रात्री शुभलाभ भरलायी,
कालरात्रि ने महाकाल को भी अपने अंक सुलायी ॥

सोता है सारा जग जहाँ, जागो हे जोगी, जागरुक !
शब्द-प्रकाश में आनन्द जगाओ, बन जाओ अनेक में एक ॥

बादल गरजे बिजली चमके, ध्वनि प्रकाश का मेल,
आनन्द रस का बारिष हो, दीपावली का यह खेल ॥

काल रात्री महाकालि भैरवि भव भाविते ।
बुद्धी प्रकाशीके मातर्नमस्ते सर्व बन्दिते ॥

घायल की आहट

महरम लगा दे साईं दिल घायल है मेरा।
दिन रात तड़पता हूँ, दिनरात तरसता हूँ, जखम बेसुमारा ।।

यादों के पंख लाके आया हूँ पास तेरे
सीने की घड़कनों में सुनता हूँ सबद तेरे (बार-बार)
तेरे ही याद आतूर मैं हर घड़ी गुजारा
महरम लगा दे साईं..

तकदीर मेरी, ऐसी संध्या होती अंधेरा
मेरी तड़फन ही गवाही देती सारा
घायल की है ये आहट,
सुनले वैद्य मेरा
महरम लगादे साईं

शावन के आँखे कारी बादल मेरा घनेरा
कभी नहीं ये बहती रहती धारा
हर पल मैं तेरी सूरत ढूँढ़ता फिरा नजारा।
महरम लगा दे साईं

समझ

जब समझा नहीं था, कंगाल था,
माँग रहा था मिला नहीं।
अब समझ गया, कुछ नहीं चाहिये,
भर गया घर माँगा नहीं।

छोटी सी ममता छोटे से घरका,
छोटा सा स्वार्थ मेरा भरा न कभी।
ममता अब मेरा विश्व भर का,
विश्वंभर साथ खड़े हैं अभी।

अब मैं शाहन शाह हूँ,
शाही सोच सही वसुधा भर का।
लघु चेतना का प्राचीर तोड़ के,
देखो विस्तार यह सुन्दर जगका।

जग में मैं हूँ, मेरे में जग,
आहा अब आनन्द का सीमा नहीं।
जहाँ देखूँ वहाँ मेरा या मैं हूँ,
मुझे मेरा प्रेम दूजा नहीं ॥

शबरी

रामा रामा रटते रटते शबरी उमर बिताया रे
राम आयेंगे राम आयेंगे राम आयेंगे गाया रे।

वन से सुमन बहु चूनचून लाया मारग पर बिछाया रे
काँटे पते कंकर पत्थर मारग से उठाया रे।

घीसघीस चंदन कस्तुरी केशर बहुविध लेप संभाला रे
कुसुम मनोहर नाना भाँति अनेक बनाया माला रे।

कच्चे पक्के बेर बहुरी जंगल से ढूँड लाया रे
राम न आये, जीवन बीति नयन से नीर बहाया रे।

जो है जाके देर सबेरे अवश्य कभी मिल जायेगा
सागर का जल बादल बन के नदी रूप में फिर आयेगा।

पुछते पुछते शबरी के आश्रम इक दिन तब हरि आये रे
जनम जनम की बुझती आशा-दीपक प्यार से जगाये रे।

शावन नयन धारा से चरणन छाति पे लाके धोया रे
उठे न उठाये शबरी चरणों से जनम सफल बनाया रे।

आसन में जब बैठे प्रभूजी लछिमन सीया समेत रे
सुधबुध खोई नाची दिवानी हो गई हत चेत रे।

भाव मगन, फल भरि भरि दोना चाखी चाखी परोशी रे
खाये प्रभूजी प्रेम से सारे नयन से नीर बरोषी रे।

दीन हीन सो धन्य हो गई योगेश्वर गती पाई रे
भावग्राही हरि भावग्राही प्रभू भाव से शबरी गाई रे।

श्याम सुन्दर घर आए

श्याम सुन्दर घर आए, श्याम सुन्दर चली आए,
मन ! मदन बदन मुसकाए, मदन वारण चली आए।
जब जब कान्ह गोवच्छ पुच्छधरी मोहन मुरली बजाए,
मन मोहन मुरली बजाए,

गोपाल किशोर बिच नन्दकिशोर वर मस्त नाच रचाए,
मन मस्त नाच नचाए ।

रुमक झुमुक चली आये, मन नुपूर ताल जमाए,
चपल चरण चली आये, मन मदन वदन मुसकाए ॥
संध्या राणी निज कनकाम्बर छटा, श्याम कलेवर छाए,
मन श्याम कलेवर छाए,

मन रुप चूपके चित ध्याए ।
तपन विमन बनहे, मनमोहन रुप चूपके चित ध्याए,

गोधूली लगन मन भाए, अस्ताचल शिखर शोहे,
मन त्रिभंग चाल चली आए, कंचन वसन लहराए ॥
केका पुच्छ देखी केकी लुभाए, केका केका गीत गाए,
मन केका केका गीत गाए ।

गोप नागरी भरी भरी गागरी, समय समझी घर आए.
मन समय ताकी घर आए।

चपल चरण चली आये, मन मदन वदन मुसकाए,
श्याम सुन्दर घर आए, अम्ब देखी मुसकाए ॥
वृन्दाबन में शाम शोभा पर श्याम शोभा गहराए,
मन श्याम शोभा गहराए।

अष्ट नयन संग, पंचदश नयन, नयन लाभ गुण गाए,

मन नयन लाभ गुण गाए।

श्याम सुन्दर चली आए, मन मदन वदन मुस्काए,
मत वारण चली आए, त्रिदश कुसुम बरषाए ॥
सुनत मुरली ध्वनी, राणी यशोदा, गृह काज तजि धाए,
मन गृह काज तजि घाए ।

आवत श्याम सुन्दरवर, बरबश उर लाई लपटाए,
मन उर लाई लपटाए ।

श्याम सुन्दर चली आए, मन रुमुक झुमुक चली आए ।

मदन वदन मुस्काए, मन श्याम सुन्दर घर आए,

अम्ब, बरबश उर लपटाए,
श्याम सुन्दर सुख पाए ॥

टिप्पणी :-

मदन	-	कामदेव
वारण	-	हाथी
कनकाम्बर	-	पीतवसन
विमन	-	दुःखी
केका	-	मोर
केकी	-	मोरनी
केका	-	मोर का आवाज
अष्ट नयन	-	ब्रम्हा
पचंदशनयन	-	शंकरजी

चाह

बना दे मुझे एक मोर घनश्याम !

मैं तुझे देखकर नाचूंगा।

मेरे पुच्छ इन्द्र धनुष बनेगा,

तेरे ताज पर शोहेगा ॥

बना दे मुझे मुरली, मुरली धर !

सुरली अघर बस जाऊंगा।

राधा माधव जुग अघर चुंबन से,

जुगल स्वर मैं भरूंगा ॥

बनादे नुपूर मुझे निरज चरण का,

भ्रमर भ्रमित गीत गाऊंगा।

राधा पद पायल घायल करके,

ताल मुरली संग भरूंगा ॥

बनादे काजल, तामस हो,

चिंता नहीं, बन जाऊंगा।

दूजा रंग न चढ़ेगा मुझपर,

भक्त नयन जल रंगाऊंगा ॥

बनादे मुझे रजकण गोकुलका,

गोकुलानन्द बन जाऊंगा ।

गोकुल आनन्द, गो कुल आनन्द,

गोकुल आनन्द बन जाऊंगा ॥

गोप, गोपी, नंद, यशोदा, राधिका,

अरु तेरे चरणन चुमूंगा ।

दूर्लभ जगमें गोकुल रजकण,

जीवन सफल बनाऊंगा ॥

टिप्पणी :-

गोकुल - स्थान का नाम, गौओं का वंश, इंद्रियों का समूह ।

कुंजवन शोभा गणेशपुरं शिवानंद आश्रम की

कुंज वन में साधिका राजे रे
नुपूर संग पायल बाजे रे।

श्याम-श्यामल-शावनी तरु छाया,
मालती श्वेत लता लपटाया रे
मन मोह लिया, मदन मुसकाया रे ॥

'आजकल' की फूल खीलती सावलीया,
राधा रंग लेती, सोचके दिवालीआ,
मन मोह लिया, मदन मुसकाया रे ॥

कुंज चंद्रातप, मानों बेगनवेलिया,
श्यामल संग श्वेत जूही जोया,
मन मोहलिया, मदन मुसकाया रे ॥

कंचन वसन ताज रजत सजाया,
श्याम सुन्दर को राधा रंग भाया रे,
मन मोह लिया मदन मुसकाया रे ॥

टिप्पणी :-

'आजकल'	-	'टुडे टुमरो' फूल का हिन्दी नाम
शावणी	-	एक फूल का प्रजाति
चंद्रातप	-	चांदनी
रजत	-	सफेद, चांदि
बेगन वेलिया	-	श्यामल रंग का फूल ।

गो-विलाप

मैं तेरी गौ हूँ गोपाल, खो गई ढूँडलो मुझे ।
भटक रही हूँ बेहाल, पासमें बुला लो मुझे ॥

दूर के हरी घास, मनको मेरे लुभायी ।
भटक गई गोठ से, कन्हैया को भूल गई ॥

प्यास सता रही थी, कालन्दी के किनारे ।
आतुर पी ली पानी, घायल विष के मारे ॥

आतप तपा रही थी, चली गई बनमें जरा ।
वहाँ भी तो बिपत्ति खड़ी, ताक रहा बघेरा ॥

मधुवन, कदम्ब वन, तालवन ढूँडी सबुरी ।
मुझको न मिले कन्हैया, यमुना किनारे बहुरी ॥

बजा दो मुरली इकबार, सुन लूँ श्रवण माधुरी ।
उखड़ जायेंगे दुःख के - जामला अर्जुन मुरारी ॥

विष ज्वाला मिट जायेगी, बन जाऊँगी पुरारी ।
मिट जायेंगे भुख प्यास, शब्द सुनी तुम्हारी ॥

आओ उद्धव, सुदामा, आओ राधा, गोपियाँ ।
वन वन भटक रही, बतादो कहाँ कन्हैया ॥

सुना दो संगीत पथ की, आओ मदन मोहन !
बहा के दो बूंद आंशुकी, पुजूँगी तुम्हारी चरण ॥

टिप्पणी :-

आतप - घाम

पुरारी - शंकर जी ।

प्रेम सरिता

नहाले मन प्रेम सरिता अति पावन ।
सुमिरण करले, परम प्रेमी हरि,
अंतर तम अघ नासन ॥

आंशू प्रेम के भक्तों के जो,
मोल उसका है कहाँ ?
वस्तु अमोलक तिन भुवन के,
तोलो साथ, तराजु कहाँ ?

बिरही के सीने की धड़कन,
प्रेमी पलक खोले जब,
विष्णु, बिरंछि, पंचानन आदि,
वशमें इसी नीर के सब ॥

पयोधि सम यह जहाँ नारायण,
शेष-शयन रचाते हैं,
मान सरोवर सम यह जहाँ,
शंकर नित्य नहाते हैं ॥

गंगधारा सम सरग का जो,
सगर कुल पावन किया,
इसी से राम चरणन धीवर,
प्रेम भर दिल भर धोया ॥

सुदामा चरण धोये थे भगवन,
इसी धारा से और न,
सूरदास के हृदय पट,
फूटे नयन खोला था न !

मीरा वाई नहाई सरिता,

दिवानी हो गई श्याम के,
निकली सरिता नरसी-नग से,
नयन धारा शावन के ॥

अशेष आशीष विभुके बन के,
इसी रूप में बहता है,
प्रेम सरिता ये, धन्य सो नर,
दिवस निश जो नहाता है ॥

राधा-विरह-विलाप

पपीहा पीऊ पीऊ बोले,
मेरे हिय का हिण्डोला धीरे डोले।
आओ आओ नंद कुवँर हो !
तुम प्रेम मारग क्यों भूले ? ॥ टेक ॥

फूल प्यार की हार से सजायी,
नव किशलय लाके बिछाई।
देखो खाली झूलता है झूला,
तुम पुराने वादा क्यों भूले ?

मंद मलय-मरुत-रथ चढ़के,
ऋतुराज, मनोज आये हैं।
अकेली मुझे ललकारते,
'पुष्प बाण बेग जरा सह ले'।

यह नीरव कानन कुंज पे,
सेना भेज दिये अलि पुंज है।
रंग देखि बिचलित अंग हो,
आके अनंग ब्यंग भंग करले ।

च्युत, अशोक, कमल,
मल्ली उत्पल - नील, हृदय कंदर निहारते ।
अदर तो श्याम घटा छाई,
मेरे, श्याम तुफान मचाले ।

दलित रसालपुष्प गुच्छिका,
मधुकर को मधुमत्त करती।
मधुसूदन ! रसीका रसाल का,
राधा बक्ष पद चालन करले।

धोऊँगी पद पल्लव धरके, वक्ष,
नयन रससे रस शेखर।
नित पदरतिरतमति रहूँगी,
तू रतिमति लज्जीत करले।

प्रेमी षट्पद के, आयुध-अशोक तू,
राधा त्रिपद, त्रिपद मिलाले।
विधि विपरित विपरित करके,
राधा जीवन, जीवन से जुड़ा ले।

कर-चरण-अधरका उपमा तू,
मैं सार्थक अशोक मनाती।
विशिख ! शिरवीशिख नयन से,
आके विरह शोक संताप हरले।

राजीव ! तू राधाजीव हारी,
तूझे कैसे मनाऊँ बता दे।
हरि-अलि दलावली बिच बाँधके,
उर-अरविन्द मेरे बिधले।

न तो, केशव कर वनज ! बनजा,
आ, उरज मंथन करले।
मीनकेतन सेवा तजके,
तू जनक कर चरण भजले।

नव मल्लीका शायिका अनंग का !
तू तो बनमाली गले में बिराजती।
मुझे डर नहीं तुझ से कदापि,
आ विरहीन राधा गल चूम ले।

तू तो गोरी, सुगंधा, मैं गोरी,
मेरे कस्तुरी तिलक गंध दिल में।
तू कृष्ण अलि पद चूँबी,

मुझे कृष्ण-अलि पद चूमा ले।

नील उत्पल ! नील कलेवर-
सम, पल पल में मैं निहारती ।
सब रूपमें श्याम शायक तू
आ, हृदय-ग्रन्थि भेद कर ले ।

पंच बाण ! पंच प्राण हरता,
तुम पंचानन करम सुमर लो
यदि कहना न मानना है मेरा,
स्मर ! मुझे भी पंचानन मान ले ।

ताप-विरह गल के जल बनूंगी,
कुंजवन ! कुंजवन बन जा।
करी-केशव मत्त मथेंगे,
कंज चरण परश कराले ।

देखो, मालती मेरे रूप लेके,
भेजती सुगंध संदेश है।
जाओ समीर ! भ्रमर-श्याम पास तू
न प्राण आमन्त्रण भूले ।

कोयल ! तू आयी कहाँ से ?
श्याम, रंग दिया तूझे कैसे !
यदि लाई है तू संदेशा, तो,
पंचम राग सुनाले ।

कृष्ण पद रंग रंग के पल्लव !
तू हृद-उदधि-अनल बना क्यों ?
कृष्ण पद ! 'कुंभज' अब बनजा,
इसे बिरह अनल सह पीले ।

पवन ! वन वेणुमें जाआ तू.

जरा भरले शब्द कोई छिद्र में।
वेणुनाद ! विवाद मिटादे,
आश प्यास मिलन की जगाले ।

मोर ! मोरनी संग नाच के,
कुछ पंख पुंछसे झाड़ ले।
उठा लेंगे कृष्ण कन्हेया,
आयेंगे, बहाना बनाले ।

हंसिनी ! मंदगामिनी मुझसी,
तू न्यारा क्षीर नीर करती।
दिलमें मिले हैं श्वेत श्याम जो,
जरा बिलग करके दिखाले ।

देखो, सर्षप-पुष्प-पीताम्बर,
अम्बरमें बिम्ब लहराते ।
तुम कहाँ हो पीताम्बर आके,
बिम्बाधरी गले लगाले ।

पथिक ! थके हो पथ श्रम से,
वसन्त वात ताप हरता।
विपरीत विधि बघू के लिये,
कंत-विरह-दाह उछाले ।

मीन जीवन, जीवन बिनु तड़फे,
मीनाक्षी दरश बिनु तरसे।
दोनों मिल के जीवन हारें गें,
श्याम ! श्याम बदन तू करले ।

बिनु कुमुद-बन्धु, कुमुदिनी,
बिनु तपन, नलीन वन झूल से।
बिनु प्राण-जीवन, नंद नंदन !
मुझे जलाके काजल करले ।

बस जाऊँगी कमल नयन पे,
नहीं कमल नयन बिछुड़ेंगे।
हर पल में साथ रहूँगी,
मुझे नयन की शोभा बनाले ।

मृग शावक ! चपल पचलासम,
चित्तचोर चित्त चरण सम तू ।
जाओ, चपल गति से, चूराला,
मुझे चपल नयन मिला ले।

शुक ! शारिका संग मिलके,
जाओ, श्याम सुन्दर जहाँ हो।
बोलो 'सारा जगत जुगल हैं,
राधा तरस रही है अकेले'।

लोहित अघर बपु श्याम तू,
पलाश ! प्रतिरूप श्यामका ।
बिहग-बिनोदी स्वभाव से,
मुझे भी बिनोद मिला ले।

आहा ! विहरि बिहगपति बिहरे,
मैं तो बिहरि बिहारी लाई हूँ।
कहीं कंदरा अंदर छिपाई हूँ,
हो सके तो, बल से बिहर ले।

देखो, शिशिर से सिसकती शिंशपा अब,
पल्लव से अवयव जुड़ाती ।
मेरे विरह-शिशिर का न अंत है,
कोई किशोर-बसंत से जुड़ा ले ।

सजी बासंती शुषमा गिरि वक्ष को,
पक्षछिदा निहारि निराश है।

जहाँ गिरिधर बिहार करेंगे,
विधि ! मेरे नयन बिहर ले।

मानो, गो, गोपाल, दावानल-ग्रसीत,
त्रसीत शरणागत ।
राधा विरहानल से त्रसीत है,
आके योगेश्वर ! उसे पीले ।

स्तन मर्दन करण पुतना के !
पंच प्राण हरि हरण कारी।
स्तन, जनार्दन मर्दन कर के,
प्राणों को प्राणों से मिला ले।

नील यमुना नीलकलेवर -
पद धोई, कलछल गाती।
नील तरंग ! तरसती प्राणों को,
जरा धोके, शीतल करले ।

तरु तमाल ! श्यामल तनु तू,
तुझे श्वेत लत्तीका शोहाती।
बन जाओ तन श्याम सुन्दर,
गोरी मुझको तन से जुड़ाले ।

छाया, कदम्ब ! अम्बसम तेरी,
जहाँ बाँशोरी बिहारी बजाते ।
ताप हारूंगी अंब के अंकमें,
मुझे समय ताकी बुलाले ।

मधुवन में मधुसूदन मिले न,
मधुसूदन व्यर्थ गुंजते हैं।
कुंज वन में कुंज बिहारी नहीं तो,
राधा ! लोत क्षीरोधी बनाले ।

कली कोमल कुसुम शिरिश के,
नहीं इन्द्र बज्र प्रहार सहती ।
शिरिश-कोमलमती उपेन्द्र ! मैं,
बज्र-विरह बिहरण करले ।

देखि गोकुल आकुल गिरिधर !
तुम गिरिवर धारण किये हो ।
मेरे गो कुल व्याकुल अब हैं,
पयोधर-गिरिवर धरले ।

हे गणपति ! बिपत्ति बिहरता !
दाता, सुमति ख्याती तेरी जग में।
गोपति को मिलन सुमति दो,
मेरे बिरह-बिपत्ति बिहर ले ।

गंगाधर ! अवढर दानी !
कंठ नील, हलाहल पिये थे।
हे भवभय हरण बिलीसी !
मेरे बिरह विष वरद ! हर ले।

जीमूतबाहन सहस्राक्षी !
त्रिभुवन पालक ! निहारो ।
इक अबला-अबला तरसती,
मधु-मिलन-वारी बरष ले ।

माया धीश्वरी ! माधव धीश्वरी !
तेरी शक्ती शर्वोपरि ख्याता ।
शठ माधव हठ को छूड़ा दे,
तन, बुद्धी जुगल जुड़ा ले।

धराधरधर ! धराधर पयोधर,
मानो, धरती धरता धराधर।

तुम धराधर संग तजके,
आओ, अंक मैं सेज सजा ले ।

रस-तरंग-रत्न रसधि के !
मम रसपति-वदन निहारो ।
हे रसिक नागर-रत्नाकर !
निज वेला उलंघन करले ।

शश न बनो, शशीमुखी कारण,
सदा प्रेम-कलंक रहेगा।
नीलनिरदबपु ! नील कुमुद-बनो,
प्रेम-नियम निभाले ।

कर चरण नयन नलिन मैं,
तुम नलिन बन्धु बन जाओ ।
मैं नलिन धर्म निभाऊँगी,
तुम बंधु धरम निभाले ।

बहु दूर मरु प्रान्तर मैं,
पत्र पद्मका ही होगा।
विधि दोनों को दोनों का बनाया,
बीच दूरी तू न बना ले।

गति घायलका, घायल जाने,
स्वर्णकार कनक पहिचाने ।
नंदकुवँर रसीक नागर हो,
आके साथ हिण्डोला झूला ले।

राधा-प्राण पपीहा पुकारे,
शूना जीवन-हिंडोला तरसता ।
आओ नवघन श्याम दयालु,
आशा बुझता दीपक जला ले।

काव्य-रसज्ञ, कवि, कोविद जग में,
ताके, रशना रस स्वादन करले ।
रसेस ! रसज्ञ ! विरहातुर जनके,
हत्-कमल-कली रमण कर ले।

टिप्पणी :-

किशलय	-	पत्ते
उरज	-	स्तन
मीन केतन	-	कामदेव
मलयमरुत रथ	-	मलय पवन रूपी रथ
ऋतुराज	-	वसन्त
जनक	-	कामदेवके पिताकृष्ण
मनोज	-	कामदेव
अलिपुंज	-	भौरों के झुंड
शायिका, शायक	-	बाण
अनंग	-	कामदेव
पंचबाण	-	कामदेवके पांच पुष्प बाण
व्यंग	-	मजाक
च्युत	-	आम
पंचानन	-	शंकरजी
उत्पल	-	नीलकमल
स्मर	-	कामदेव
कंदर	-	गुफा
कंजवन	-	कमल के वन
रसाल	-	आम
करी केशव	-	हाथी रूपी कृष्ण
मधुकर	-	भौरा
समीर	-	पवन
रति	-	कामदेव की पत्नी

हृद-उदधि-अनल	-	हृदय रूपी सागर का अग्नि
षटपद	-	भौंरा
कुंभज	-	अगस्तिऋषि
आयुध	-	अस्त्र
वन बेणुमें	-	बांशके वन में
त्रिपद	-	तिन पद, विष्णु
विधि विपरित विपरित करके	-	विपरित नियम का विपरित करके अर्थात साधारण नियम से ही
राधा जीवन	-	कृष्ण
सर्षप	-	सरसों
विशिख	-	बाण
अम्बर	-	आकाश
राजिव	-	कमल
दलावली	-	पंखुरीआँ
श्याम बदन	-	कालामुख
नलीन	-	कमल
पयोधर	-	स्तन
चपला	-	बिजली
सहस्राक्षी	-	इन्द्र
पलाश	-	एक लाल फूल
विहंग	-	पक्षी
धीश्वरी	-	सरस्वती, बुद्धी की देवी
बिहरि	-	बिना हरि के
बिहरे	-	बिचरण करता है
बिहरि	-	हरण करके
रसधि	-	सागर
शिशिर	-	ठंड
शश	-	खरगोस
पल्लबसे अवयव जुड़ाती	-	नये पत्तों से शोभित हो रही है।
नील कुमुद	-	नील कमल
रसेश	-	कृष्ण

शुषमा	-	शोभा
मधुसूदन	-	कृष्ण, भ्रमर
उपेन्द्र	-	कृष्ण
शिखीशिख	-	कृष्ण
बिम्बाधरी	-	लाल औँठ वाली
जीवन	-	जल
कुमुद बन्धु	-	चंद्रमा
गोकूल	-	इंद्रिय समुह
चपल	-	चंचल
जीमूत बचहू	-	इन्द्र
अबला	-	बलहीन स्त्री
मधुमिलन	-	कृष्ण के साथ मिलन
बिहगपति	-	गरुड़
घराघर	-	पर्वत, शेषनाग, बलराम
बिहारी	-	कृष्ण
बिहर ले	-	छीन ले
बेला	-	तट, सीमा
शिशपा	-	शिशम का पेड़
रशना	-	जीभ
रसज्ञ	-	रसको जानने वाले
पक्षच्छिदा	-	इंद्र
लोतक्षीरधि	-	आंशु रूपी क्षीर सागर
बिम्ब	-	परछाया
वनज	-	कमल
कुमुदिनी	-	कुई फूल
शावक	-	बच्चा
गोपति	-	कृष्ण
लोहित	-	लाल
अधर	-	औँठ
धराधर धर	-	गिरिधर

कंदरा	-	गुफा
रसपति	-	चंद्रमा
सिसकती	-	कांपती
स्वादन	-	चखना
अंक	-	गोद

स्वतंत्रता की स्वर्ण जयन्ती

जो सवतंत्रता के भीषण रण में:
प्राण को क्षीण किये क्षण क्षण में:
नया अस्त्र लिये हाथ अहिंसा का:
नया जोश उनमें था जिगीसा का।

उनके कठोर तपके वरदान;
स्वतंत्रता मिली हमें मूल्यवान ।
गिरीनदी के तीव्र बेगोपम:
बिता अर्धशत समा पल सम।

राजतंत्र नहीं देश गणतंत्र है,
हर प्रजा यहाँ परम स्वतंत्र है।
मन्त्र तन्त्र नहीं, विकसित हुआ यंत्र है;
धर्मनीति, दण्डनीति नहीं, कुटिल नीति सर्वत्र है।

अत्याचारी हो गये नीति उपदेशक:
सदाचार के जगह पड़े भ्रष्टाचार शतक ।
रक्षक भक्षक बने, पोषक शोषक,
नेता नीति भ्रष्ट है; नष्ट दिग्दर्शक ।

मनुस्मृति, वर्णाश्रम धर्म उपेक्षित है,
धर्म शास्त्र संकीर्णता है, हम धर्म निरपेक्ष हैं।
विदुर दूर इतिहास के, आज नहीं मान्य है,
चाणक्य तो चणा चबा गये, आज नहीं गण्य हैं।

नवयुग आया है यह विज्ञान का,
उद्भावन हुआ नव सुख साधनों का।
प्रकृति के विरुद्ध हम जंग जमा लिये,
सूक्ष्म रहस्यों को अब पता लगा लिये।

हालत डामाडोल है जरा सोचो सही,
स्वतंत्रता के नाम हम खो गये कहीं।
अगर तुम स्वतंत्र हो तो समाज में क्यों ?
हर पग में दूसरों का आलम्बन क्यों ?

समाज हमें बनाता, हमें समाज को बनाना है,
किसी से कुछ लेना है तो उसे कुछ देना भी है।
सीमा उल्लंघन करना यहाँ सख्त मना है
स्वतंत्रता का सही अर्थ, सीमा पर ही रहना है।

उच्छृङ्खलता को क्या स्वतंत्रता कहना है ?
उदण्डता को क्या अनुशासन सोचना है ?
मनमानी को क्या आदर्श मानना है ?
दानवता को क्या मानवता बताना है ?

ओ बापू जी के स्वप्न राज्य के प्रजागण !
राम राज्य लाना है, करो अब दृढ़ मन स्वार्थ को
भूल जाओ जरा देश हित के कारण,
परहित में निजहित निहित, तुम्हें रहे सदा स्मरण ।

सुख त्याग से सुख लाभ भारत का धर्म है,
जिओ और जीने दो यह नीतियों का मर्म है।
परहित साधन सब साधन का मूल है,
परपीड़ा ही पाप है रोगों में यह शूल है।

ओ विस्मृत सुप्त सिंह शावक !
मत बनो भेड़िया भवन के याचक।
एक बार उठो, दहाड़ो, काँपेंगे मतवाले दंतीदल,
असंभव होगा संभव, नव वैभव आने में एक पल।

क्षुद्र हृदय दौर्बल्य पल भर में तोड़ दो,
परिवार का 'लघुममता' विश्व के साथ जोड़ दो।
भारत में क्यों विश्वभर में राम राज्य लायेंगे

हम है भारत संतान, शांति दूत कहलाएँगे।

स्वतंत्रता का मधुर स्वाद हर प्राणी को लेने दो,
घरघर में उल्लास भर नृत्यगान होने दो।
पंच भूर्तोमें भारती की वीणा स्वन गूंजने दो
स्वर्ण जयन्ती में स्वर्ण हंस खुल्लासा उड़ने दो।

ओ भारत माता के आंगन के अधरिवले कलीगण।
कब खिलोगे ? बिखरोगे सुगंध, बन के सुमन ।
आशा आकाश के ओ प्रज्वलित तारागण ।
दिशा दिखाओ राही करेगें अनुसरण।

भाग्य से भारत भूमि, फिर कब नर तन मिलेगा,
बीता पल, चाहे कुछ करो, लौट न आयेगा।
निःश्वास में विश्वास नहीं रुद्ध कब हो जायेगा,
आज नहीं, अभी कुछ कर लो, यही हाथ आयेगा।

‘भविष्यत्’ अनिश्चित है, मृत सम ‘अतीत’ है,
‘वर्तमान’ ही जीवन का सर्वस्व सम्पत् है।
‘कर्म’ ही जीवन है। आलस्य भू-भार है,
मानव का मानदण्ड ‘कर्म’ एक सार है।

ओ भावी इतिहास के मूल प्रकरण !
लड़ो यह चिरंतन संग्राम जीवन और मरण।
स्वतंत्रता मिली नहीं, मिलेगी, सदा नूतन,
गायेगा विजय गाथा इतिहास सनातन ।

आज इस पुण्य पर्व पर दिल में सपथ ले लो,
प्राण प्यारे इस तिरंगा के नीचे सिर झुका लो।
इसके शान, मान सदा हम ऊंचा रखेंगे,
चाहे प्राणो को हंस कर बलि पर चढ़ायेंगे।

ज्ञान का प्रतीक ‘नारंगी’ से रंग-रंग रंगाएँगे।

‘स्वेत’ से सादा जीवन, उच्च विचार लायेंगे।
विजयी तिरंगा ‘हरा’ यहाँ हरियाली लायेगा।
सबसे ऊपर रहकर, राह सबको दिखायेगा।

जन-जन मन अधिनायक वर दो !
स्वर्ण जयन्ती पर यह शुभ आशिष दो !
संकल्प सिद्ध हो, तब ही कहलायेगे,
भारत का संतान हम, करके दिखलायेंगे।

स्वामी १०८ चैतन्यानन्द जी महाराज के ७५वाँ जन्म तिथि के उपलक्ष में

श्रद्धाञ्जली, अगस्त २००१

शिवानन्दमय ब्रह्माम्भोधि के, चैतन्यानन्द घन द्विव्य तरंग,
नव वारिद बीच विद्युल्लेख सम, प्रगट रहो सदा भरि उमंग ।

तुंग तुषार शिखर के अंक, अंकित यह भूभाग में,
विभुविश्वनाथ विराजते जहाँ, महा महिमा गोचर सब जगमें ।

संत सन्यासी मुनि ऋषिओं के, यह देवदुर्लभ तपस्थली है,
ज्ञान विराग भक्ति मुक्ति देने को, सदा उद्यतमहावली है ।

इस भागीरथी के पावन पुलिनपे, यतिवर तप तत्पर हो,
काशीवासी कैलासी के आशीष, वर्षा सदा तव सीस पर हो ।

शिवानन्द जिस हृदय दीपक में, दिव्य ज्ञान ज्योति जगा दिये,
हृदयग्रन्थि-भेद-आनन्द उसे, तपोवन ग्रन्थ ज्ञान से दिये ।

पठन पाठन ज्ञान वितरण, वेद परायण सम पारायण है,
चार बार युग अयन बिताये, नमन नमन बारबार नमन है ।

पाया परम हंस मानसरोवर, ताल तलेया क्यों डोला करें,
श्रद्धाञ्जली शुभकामना मय, यह सुमन माला स्वीकार करें ।

सप्तदशपंचसंबत्सर कियो, पूर्ण इस मर्त्यमंडल में,
सप्तदशपंचसहस्र प्रणाम, पदार्पण करो शत अष्टोत्तर में ।

षोडश कला युत षोडश पंक्ति यह, पद पल्लव में समर्पित है,
वज्र जयन्ति महोत्सव वेला में, प्रेमानन्द मति मानित है ।

टिप्पणी :-

ब्रह्माम्भोधि	-	ब्रह्मसागर
चारबार युग अयन	-	४८ वर्ष
विद्युल्लेख	-	विजली
तुंग	-	उच्च
सप्त दशपंच, संबत्सर	-	७५ वर्ष
तुषार शिखर	-	बरफ की चोटी
मति मानित	-	मन से समानित
अंक अर्कित	-	गोद में
महावली	-	हनुमानजी

श्रद्धेय परम पूज्य ब्रह्मलीन स्वामी कृष्णानंदजी महाराज को श्रद्धाञ्जली समर्पित, ६/१२/२००१

शताब्दी के प्रथम चरण में, प्रारंभ यह प्रकरण,
शताब्दी के अवसान पर, प्रकरण हुआ गंगार्पण ।

सुरासुर सागर को जैसे, अमृत के लिये मथ लिये थे,
राजा वेन के शरीर से, प्रादुर्भाव पृथु जैसे हुए थे।

ब्राह्मण वह प्रारब्ध-कर्म-सागर, मानो मथ डाला,
उससे सुरतरु यह, सुब्बराओ को निकाला।

मेधावी माधवा द्विजने, तरुवर को रोप गया,
अभिषेचनार्थ गुरु को, गोविन्द ने सौंप दिया।

पिस जाने के बाद मेहंदी, रंग लाती है,
खाने के बाद, नरों को अकल आती है।

अर्थ के लिये दर-दर, ठोकर खाने के बाद,
असहाय को होश आया, परमार्थ का याद ।

दक्षिण का यह दीन दुःखी, उत्तराखंड आ गया,
सुब्बराओ सरिता को मानो, शिवानन्द सागर भा गया

मिला रंक को रत्न, नेत्र, नेत्रहीन को,
चातक को स्वाती जल, या जल मिला जलज को।

सगुरु शिवानंद रूपी, चिंतामणी के चिंतन में,
रवि सुब्बराओ, संक्रमण, किया मकर कृष्णानंद में।

उपनिषदों को गौ माना, शिवानन्द के यह नंदन,
कृष्णानन्द दोहने वाले, भोक्ता ज्ञान-पिपासुगण।

ज्ञान-पय-धारा-गंगा, गंगा तट से बह चला,
पिये सब धरा बासी, भिजा तन मन चोला।

मानों सुरतरुवर पर, फल फूल छा गये,
धरा प्रफुल्लित हुई, सप्त पिढ़ी तर गये ।

शिवानन्द महोदधिके, 'चिदानन्द' जल है,
'कृष्णानन्द' उमंग भरा, तरंगों के तरंग है।

'कृष्णानन्दअध्याय' यह, दर्शन साहित्य भरा,
'समय' जो लिख रहा था, मिल गया अतीत में सारा।

शिवानन्द आश्रम क्या, 'कृष्णानन्द' को भूलेगा ?
हर पाई के पीछे उसका, हस्ताक्षर नहीं देखेगा ?

इतिहास न भूलेगा इसे, स्वर्णाक्षर में लिखेगा,
दार्शनिक-हृदय-द्वार, खोलके खूब लूटेगा।

आभूत संप्रव तक, आध्यात्मिक आकाश में,
कृष्णानन्द तारका तुम, तपोगे स्व-प्रकाश में ।

कुहेरे के तरह जीव, आते हैं और जाते हैं,
क्या है वह जीन्दगी जो, इतिहास में न आंकते हैं।

चपला चमकती है फिर, पलमे मिट जाती है,
किन्तु घनघोर तमसा को तो, चीर के फाड़ जाती है।

आहा ! प्रभाती तारा समागई दिनकर में,
चपला मिल गई, नील जलद में पल में।

सिन्धु में जल विन्दु सम, समा गया अनन्त में,
जीवात्मा परमात्मा पाया, जीवन यात्रा के अंत में ।

सुमन-सुगन्ध मानों, गंधबह में बह चला,
अस्ताचल मुखी तपन, आतप समेट चला।

सन्ध्या की मनोरम छबी, चांदनी में 'अहं' खोया,
विधि का विधान ये तो, होना था सो हो गया।

भूत संघ विघटित हुआ, पंच महाभूतों में,
परदेशी लौट गया क्या, अंत में निज देश में ?

जटाशंकरी समागई क्या, शिव-जटा-कटाह में ?
अथवा समागई विष्णुपदी, विष्णुपद में ।

समस्त वाणी विश्रान्त, अन्ततो आत्म ज्ञान में,
वाणी विराम, हो गई आत्माराम में।

जीवन-नाटक का यह, अंतिम था पट पतन,
दिवसान्त में प्राण-पक्षी, नीड़मुखी भरा उड़ान ।

अंतिम किरण एक यह, अंशुमाली में मिलेगा,
धरा वक्ष से दूर कहीं, छिपकर जरा रहेगा।

जीव-कृष्णानंद-कृष्ण ! यदि विश्राम चाहते हो,
चिन्मयी मा यशोदा के, आंचल क्यों न ढूढ़ते हो?

कृष्णानंद के षोणितकण, आश्रम के रगरग,
चिदानंद के चिंतन धारा, रग-रग में जग मग ।

ऐसी आधार शीला की सुधि, सौध क्या खोयेगा ?
नहीं; सुधि आये तो, तर आंसू से हो जायेगा।

त्याग पत्र तो दे दिये तुम, कर्मों के सब सीमा से,
निर्बंध भी हो गये फिर, प्रन्यासी के बन्धन से।

अन्ततः मुक्त हुए तुम, महामंत्री के पद से,

छूट क्या पा सकोगे, प्रेमियों के हृदय से ?

हृदय के उदगार मेरा, सुख दुःख का मिश्रण है,
सुख तो साधु पाया, परमात्मा पद पावन है।

दुःख है इस बात की, ममता मेरी नहीं मानती है,
कितने रोकने पर भी, ये अश्रु धारा नहीं थमती है।

पुरातन वसन को क्या, त्याग देने में सुख नहीं?
नव वस्त्र नहीं मिले तो, सुख सही या दुःख सही ?

आराधना के अवसर पर, श्रद्धांजली समर्पित हो,
सम्मिलित श्रद्धालुओं के, भाव रूप तुम उपस्थित हो ।

मुकुलित यह मुकुल माला, गले का तव शृंगार हो,
मेरी यह भावना धारा, श्रद्धा प्रेम की कागार हो।

जर्जरित पिंजर मुक्त विहग, जाओ विहायस में,
परम हंस उड़ो अब, उन्मुक्त चिदाकाश में ।

बंधन बाधा नहीं, नील नभके पारजाना,
आत्मा तुम जब चाहो, परमात्मा मैं मिल जाना ।

‘यदगत्वा न निवर्तन्ते’ परम धाम वह पहुँचना,
धर्म संस्थापनार्थाय, सिंधु से बिंदु फिर आना।

गोलोक में चीर रास, चलता है, वहाँ जाना,
कृष्ण की आनन्द दात्री, पट्टसखी वन जाना।

हमारी यह श्रद्धाञ्जली, महापथ का पाथेय हो,
अनन्त कोटि प्रणाम तुम्हें, तुम सब का श्रद्धेय हो।

हरि ॐ तत् सत् कृष्णार्पणमस्तु

टिप्पणी :-

अवसान	-	समाप्ति
सुरतरू	-	कल्पवृक्ष
सुब्बराओ	-	कृष्णानंद जी का पूर्वाश्रम का नाम
माधवा द्दविज	-	माधवा ब्राह्मण
अभिसेचनार्थ	-	अभिषेक के लिए, सींचन के लिए
रवि.. कृष्णानंद में	-	सुब्बराओं मकर संक्रान्त के दिन सन्यास लेकर कृष्णानंद बन गये।
आभूतसंप्लव	-	प्रलय
तमसा	-	अंधकार
गंधबह	-	वायु
विष्णुपदी	-	गंगा
अंशुमाली	-	सूर्य देव
प्रन्यासी	-	ट्रष्टी
मुकुल	-	कली
विहायस	-	आकाश
पाथेय	-	रास्ता खर्चा
आतप	-	किरण
भूत संघ	-	शरीर
जटाशंकरी	-	गंगा
विष्णुपद	-	आकाश
षोणित कण	-	रक्त बूंद
मुकुलित	-	विकसित
विहग	-	पक्षी
महापथ	-	मरणोपरांत मार्ग

श्रद्धेय स्वामी चैतन्यानन्द जी के महासमाधि पर श्रद्धांजली

मिट गयी रे वह चमक चहुँ दिशिसे !
आकाश के किसी कोने में छिपा था,
मानो कदा सूरज शिखर पीछे था,
किरण दो विखेरे था स्वभावसे,
गयीरे चमक चहुँ दिशिसे ॥१॥

निविड़ वन कन्दरा कुसुम कली वह,
उप वनों से दूर की मल्ली वह
लगी मनोहर सुषमा सौरभ से
मिट गयीरे चमक चहुँ दिशिसे ॥२॥

पार यश कीर्ति स्वरूप सीमा थी,
विविक्त में विकशी अनूप शोभा थी,
अरति चंचरिक जन संसदिसे,
गयीरे चमक चहुँ दिशिसे ॥३॥

सन्यासी मानसीवृत्ति रोक लिए थे,
तन-रथ चढ़के संसार घूमे थे,
इंद्रिय अश्व कसके लगाम से,
मिट गयी रे रथ चिन्ह चहुँ दिशिसे ॥४॥

तन सुख मन सुख त्याग दिये थे,
वीत रागी धन कहाँ से पाते थे,
संतोष धन पाये त्याग से,
मिट गयीरे चमक चहुँ दिशिसे ॥५॥

विहग विहायस उड़ने गया था,
चिरकाल तक खूब उड़ा था,
लौट चला निज नीड़,थकान से,
मिट गयी रे उड़ान दस दिशों से ॥६॥

दीपक सारी रात जला था,
तमस निशा का सारा मिटा था,
बात-नियति चल पड़ा कहाँ से,
मिट गयीरे चमक चहुँ दिशिसे ॥७॥

तरुवर गुरुवर रोप दिये थे,
पथके पथिक फलों को चखे थे,
आ धमका कुठार-काल कहाँ से,
मिट गयीरे चमक चहुँ दिशिसे ॥८॥

धीरज धरो मन ! बीज पड़े हैं,
सिंचो नीरसे कछु अंकुर आये हैं,
फलेंगें फूलेंगें प्रभो ! आशीष दे दो,
सदगुरुकी आशा पूरण कर दो ॥९॥

चैतन्य आनन्द ! चल पड़े हो,
उर्वारुकमिव बंधन तोड़े हो, विन्दु !
तुम लौट न सकोगे सिन्धुसे,
मिट गया रे आवागमन चहुँ दिशिसे ॥१०॥

चांद सूरज जहाँ आते न जाते,
मन बुद्धी वाणी लौट फिर आते,
मिलो महा प्रकाश पुंज गले से,
चलो चंचल चमक चहुँ दिशि से ॥११॥

नेति नेति कहि वेद निरूपा,
सहजानन्द अखंड अनूपा,
अम्बु अवनी आदि विम्ब जिसका,
परमहंस तुम स्वभाव उसका ॥१२॥

जिदगीं सारी बिताये एकांत में
बनो अब एक परम एकांत में,

एकान्त प्रेम जो भक्त जनों के
बरवस बसना हियमें उन्ही के ॥१३॥

चैतन्यानन्द सहज सुख राशि,
वास कियो पुरी मोक्षदा काशी,
साधु समाज काशीवासी सारे,
इतिहास में नाम तुम्हारे ॥१४॥

यही श्रद्धाञ्जली सुमन स्वीकारो,
श्रद्धा विश्वास दोउ नयन उज्जारो,
समन शमन है शमन पुरीका,
सहसा साहस हो शेष शयनका ॥१६॥

षोडशी-पुष्पाञ्जली षोडश पदों में,
अर्पण चैतन्यानन्द पदों में ॥

दिनांक १४.०९.२००३

माँ की पुकार

इस शुभ घड़ी पर माँ आँसू वहा रही है।
उसे क्या अतीत की सुधि कुछ आ रही है।
या घर के झंझटों से वह अति चिंतित है।
या अपनी ही हालत से दिल भर व्यथित है।

वह दिन था कभी मेरी आशा की कलियाँ
खिली खुल गई थी सारी बंधन की बेड़ियाँ,
आंगन में फली फूली, वैभव की बल्लीयां
में भरते थे स्वर शांति की शुक सारियां।

विभु ! इस वैभव को क्यों मुझ से छीन रहे हो ?
बच्चों ! बरबस क्यों आपस में लड़ रहे हो ?
कुलरीति में क्यों कालिख लगा रहे हो ?
शांति भूमि में क्यों विष-बल्ली बो रहे हो ?

भूल गये हो अब वह पूर्वजों के आदर्श ?
जो त्याग दिये थे जीवन के सर्वस्व को सहर्ष ?
माँ का सम्मान रखा, बलि दिया प्राणों के
वीरों के वे वीर थे प्राण प्यारे हर प्राणी के ।

सत्य प्रेम, अहिंसा अरु त्याग थे वे मूर्तितान,
विचित्र चरित्र यश उनका अब भी विद्यमान,
स्वप्न उनके थे कभी स्वर्ग शोभा उतारेंगे
वैकुण्ठ आनंद धारा-धरा पर लहरायेंगे ।

उन पूर्वजों के वंशज ओ ! करना स्वप्न साकार था
आजादी जो दी तुम्हें मिलकर उसे भोगना था,
हाथी दलदल में जैसे डूबे तुम स्वार्थ में,
धर्म, वर्ण का बहाना बस, बसा लिये हो मनमें ।

भूले, भाई का नाता, भूले पूर्व प्यार को,
”तेन त्यक्तेन भुञ्जिथा” इस वेद वाक्य को
पर दुःख में दुःखी अरु पर सुख में सुखी होना
मेरा कुल धर्म यही, यही है मेरा कहना।

ओ मेरे अंक में सोये अबोध संतान गण।
जागो यह शुभ प्रत्यूष, रखो आन मान शान।
यह समय है ऐसे कर्म कुछ करने का,
शांति शौध के शिला न्यास कर देने का।

आंसु से आशा बल्लरी सिंची थी सोच सोच के,
बाबू ! विटप विश्राम दे दो इसे प्रेम के,
होने दो फलबती इसे, मिटा दो मेरी वेदना,
माँ का मैं लाल हूँ तब गर्व पूर्वक कहना।

भर दो स्वर्ण घटिका मिली थी जो धरोहर,
मिटा दो प्यास जगकी जानाम्बू अंजली भर,
प्रदीप प्रज्वलित कर तुम मिटादो तम निशा का,
भर दो विश्व भर में प्रकाश इस घर का।

घर जन्म भूमि है स्वर्गादपि गरीयसी,
माता तेरी भारत भूमि, सुत ! तुझे पुकारती,
ओ मेरे शूरवीरों के निष्कलंक कुल चन्द्रमाँ !
जागो, फैलाओ जग में चंद्रातप की सुषमा ।

भारत माता की यह समय की पुकार जो,
है कोई सपूत वह सुनता श्रवण में जो,
क्यों नहीं तप जाता शोणित वह धमनी में ?
जो तूफान मचा देवे हृदय आकाश में ।

हम नहीं मैं हूँ माँ ! तेरा स्वर सुन रहा,
क्यों नहीं शूर कोई बीच उठ कह रहा,
निश्चय करूँगा दान समय जो माँग रहा,

दूंगा आश्रय उसे जो अंकितन सा घुम रहा।

मेरी लीला आपार

पानी बोले मैं हूँ लहरें, मैं हूँ जुआर भट्टा
तुषार मैं बुदबुदें, मैं तुफान घण्टघट्टा।
मैं आवर्त मैं हूँ धारा, नदी सागर सारा
ताल तलेया सर सरोवर, सीकर मुझसे न न्यारा ॥१॥

धरती बोलती मैं भूधर मैं प्रांगण प्रान्तर,
मैं हूँ प्रांत प्रदेश देश, महादेश अंतर।
समय बोले मैं घटिका, दिवस मास वत्सर,
युग मैं कल्प महाकल्प, कल्पना कल्पान्तर ॥ २ ॥

कंचन बोले कुंडल कंकण, मैं सव आभूषण,
मन, बुद्धी, चित्त अंहता, कल्पना का ही तोषण।
एक सत्य सबमें बिराजे, संसार निराधार
नभ निलीमा, उषा सुषमा, कल्पना का ही आकार ॥३॥

सर्वसमर्थ बोला मैं हूँ, देखा अपना रूप,
कल्पना नगरी निहारा, नाना रूप अनूप।
लोमलोम ब्रह्माण्ड देखा, महाकाल बसेरे,
विष्णु विरंचि रुद्रगण, अनंत हैं सितारे ॥४॥

काल कालको कलित किया, कबलितकिया,
अनंग अंग देखा निसंग, संग विसंग किया।
निज माया मोहित हुआ, बारूणी विहुल सा
रग मैं जग देखा, अनंत त्रसरेणुसा ॥५॥

स्वप्न मैं जादुनगरी था, जादुगर जादुमेरा,
मैं हूँ राजा रंक भिखारी, नट नाटक सारा।
नवधन घोर भयंकर, मैं गंभीर गरजा,
मैं दामिनी दमका बन, मोर नृत्य सिरजा ॥ ६ ॥

मैं लता पादप पल्लवित, मैं कोमल कलीका,
मैं सुन्दर सुमन सुगन्ध, मैं रचना था माली का।
मैं जलज, मरालमाला, जलद जलाशय का,
मैं बना रग रग रंग, वह जादू नगरी का । १७ ।।

हिमवन्त मैं हिम शोभित, मैं उत्तुंगशृंग हूँ,
मैं गंग उत्संग तरंग, अभंग उमंग हूँ।
मैं अखंड कल्पना धारा, मेरा नाम संसार है,
मैं ही मुझको समझें तो, मेरी लीला अपार है ॥८॥

स्वाधिनता की पुकार

वाला वह चपला थी सरला थी सुहासिनी,
बलाहक नव बलाहक बक्षमें अति सुदर्शिनी,
वनकुरंगीसम थी चलन मीननयना,
वन-पल्ली नवयुवाओं की जीत ली थी भावना - १

वृद्ध पितामाता अति दिनों का वह धन थी,
बहनो के मानों प्रणों का वह प्राण थी,
बन गई थी परछाई सब सहेलीओं की,
बात ही बातों में हरती नजरीयाँ सबकी - २

वयसमें षोड़सी, उर्वशी सम शशी मुखी,
बनालिया था सरासन मदन वह ध्रु देखी,
सुन्दर गिरिनदी क्या कलछल विलपती !
किंबा कल्याणी बनदेवी सदय मुस्कराती ! - ३

गिरिग्राम सो उर्वरा हराभरा मनोहरा,
बनगया था आकर्षण सबका सदा मुखरा,
बना कभी दैवयोग आया एक परदेशी,
बहाना था व्यवसाय, बोलता था भाषा देशी - ४

वेश भूषा ग्रामीण सा हसमुख नव युवा,
बसा पल्लीमें जनमन वाणी कर्णमें अथवा,
चली चर्चा यदा कदा नवागत तरुण की पनघट,
वनबाट, गो गोष्ठमें वालाओं की - ५

'कुमुदिनी' 'कुमुद' बन्धु को निहारने लगी,
कुमुद नयन बाण उसे तरसाने लगी,
एकांत में विखरती कुमुदिनी प्रेमलता,

कुमुद-पादप कभी दिलभर उठालेता - ६

कुमुद-कुमुदिनी-प्रेम घनीभूत होने लगा,
क्षीर नीर विलगन हंसको असंभव लगा,
एकान्त वन केदार नदी पुलीन में कभी,
दिखते हैं युगल छबी मंदीर प्रांगणमें भी - ७

सघन कुंजवन में पनचक्की निर्जनमें,
नजरो से दूर कहीं शीतल तरु छाया में,
पनपती रही बिना बाधा गुप्त प्रेमलता,
अज्ञात कुलशील वह वृक्षबक्ष आश्रिता - ८

एकदा चार चरण निकल पड़े प्रत्यक्ष,
बर्धगे प्रेमबंधसे हम सबके समक्ष
उड़चले पंखेरू दो परदेशी के स्वदेश
हिम्मत बान्धे हैं मानो पियुष लाना है खगेश - ९

अनिश्चित भविष्य को अनदेखा करदेना,
हो सकता नुकसान चीरकाल तक रोना,
ठोकर खानेके बाद अगर अकल आवे,
फसल सुख जाने के बाद पानी किसको भावे - १०

कुमुदिनी-कुमुदका प्रेम एक था नाटक,
एक रही सती सीता, दूजा रावण बंचक,
कन्या-व्यापार-गिरोह-सदस्य था सुविक्षात,
कुमुद था झूठा नाम, झूठा सब जातपात - ११

भोलीभाली गढवाली वाला प्रेम आराधना,
देखी न सकी नियति, गति अति बिडम्बना,
अज्ञात कुलशीलका विश्वास नीति विरुद्ध,
मार्जार दोष-दंडित यथा जरद्वगृद्ध - १२

निर्जिता निरबलंबा निरुपाया निरुत्साहा,

नितान्त दुःख दुःखिता नीड-निर्गता निरीहा,
दूर कहीं पिंजर में निरवधि शोकाकुला,
वन्दी चाहती है मुक्ति अभागिनी खगवाला - १३

विलपती कोसती रहती किसमत को करमको,
नेत्र गंगधारा मानो मिलना है सागरको,
भाई वहन-सहेली-वृद्धामाता अनुवारि,
यमुना रूप लिया मिलने को गंग वारि-१४

पथहरा पांथ अटवीमें भयंकर,
नीशा भय भ्रम ग्रस्त नहीं कोई त्राणकार
महार्णव बीच पोत, झंझा झकझोर,
जर्जरीत, जलमग्न चाहता, जीवनापार - १५

राहु आज बन्धु 'कुमुद', कुमुदबन्धु कुमुदिनी
आराधना आतंकित आज, प्रेम है चांदनी
नियति कबलित आज, पुकारती स्वाधिनता
है कोई तोड़ बंधन, निजदेश पहुंचाता ! - १६

पराधिनता की लहु वह विरहाश्रु रूपमें,
दिखती आज भी जरठों के नयनों में,
निरीह ग्रामिण कभी मिलते मेलाओं में,
आज भी कुमुदिनी छाया नाचती पलकों में - १७

त्रिजटा संदेश

सीते ! अवश्य मिलेंगे राम रोदन त्यागो,
राम-मरण-भय भ्रम तजि जागो,
दशानन आनन मानव तन ये,
दशइन्द्रियधारी मायावी मन ये,
दशप्राणपुष्पक-यान विहारी,
दशदिश भ्रमत सदा निशाचारी - १

त्रिगुण त्रिसहोदर त्रिभुवन व्यापी
सत्त्व विभिषण कुंभकर्ण तम पापी,
रज राजा अहंरूपी रावण गर्वी
मन ही रूपान्तर शासति उर्वी - २

मंदोदरी मंदमति सुन्दरी सुहागिनी,
रज तजि बनेगी कभी सत्त्व गेहिनी,
काम कोध लोभ आदि अनेका,
मंत्री, सेना, सेनानी अविवेका - ३

बोले त्रिजटा त्रिगुणातीत गुरु,
तजो मोह जीव-सती सीयाभिरु !
पति तुझे पुरुषोत्तम राम मिलें गें
जनम जनम पाप ताप हरेंगे - ४

झाड़ू गीत

ओ ये इज्जतदार ! जरा होशमें आओ, इज्जत अपने संभालो,

नहीं तो बेइज्जती हो जायेगी जगमें

जग हँसेगा तुम रोओलो।

अरे! जिस घर में रहते हो तुम,

उसे धर्मशाला न समझलो,

नितप्रति जरा साफ रखो उसे

सुबह शाम झाड़ू लगालो।

हाथ उठाके बोलते फिरते हो

यह घर मेरा, यह घर मेरा है

तो अन्दर बाहर जो कूड़े करकट

पड़ा क्यों अंधियारा है?

बोलो काले ! दिल खोलके इकबार

यह सब मेरा है या तेरा ?

क्या यही बोलोगे न तेरा, न मेरा

मेरी गोरी का हेराफेरा है।

काले परदेपे प्रकाश पड़े तो,

परछाईं दिखे अंधेरा है

पूछा जब जब कब मारोगे ?

बोला तू आने दो सबेरा है।

वह 'सवेरा' कब आयेगा ?

राज की रात घनेरा रे,

उठो लाला ! बांश को तेरा

झाड़ू बना, मारो फेरा रे।

ओ ग्वाले ! गोबर धन धर

मानुं गोबर उठा जरा,
गंदा गोबर को गो वर बना दे
दिखा दे चमत्कार।

गोरे के भैया ! गोरी को साथ लाआ,
चाहे उसीसे करवा दे सफाई,
मेरी सफाई में तेरी भलाई
दुनिया देगी गवाही।

बेणुगीत, भ्रमरगीत, गोपी गीत,
कई गीत सुना हूं तेरा,
गंदगी भरा यह सूना जिंदगी की
झाड़ू गीत सुनले मेरा।

झाड़ू लगादे भाई,
कैसे चक्कर में पड़ गये हाई!
तुझे है गोरी की दुहाई
हाई, झाड़ू लगादे भाई।

टिप्पणी :-

घर	-	शरीर
कूड़े करकट	-	बदगुण
अंधियारा	-	अज्ञान
बांश	-	बाँशोरी
गोरी	-	महामाया
गो वर	-	श्रेष्ठ गो - कामधेनु

संध्या के प्रति

संध्या की मनोरमा रमारमण चरण

रमा दिआ हृद, समा गया मन में,
जमादिया नारद पद पग पग मग में
राग वाणी वीणामें, विरागी मन में ॥

किया द्रवित पाप-चाप-कठिन

- पाहन-हिय, कंज-चरण कंज खिलाया
भावानन्द सागर लहरों से लहरें टकरायी,
बेला अलंघन किया

नवघन श्याम में कहीं नवलकिशोर वर

हृदके मेरे अंतर्हित हो गया,
संध्या ! चपलासम चपल नयन को
क्या चूपके आंचलमें चिपकालिया ?

तभी अभिशप्ता तू शोभा शर्वरी वक्ष में

मेरे जैसे छबीधन खो दिया,
पलभरका वह आनंद गर्व खर्व हुआ
सौभाग्य दुर्भाग्य रूप ले खड़ा हुआ ॥

तेरी शोभा शोभाराणीको भी लूभाती

लुभागये पितामह अज कभी,
भयभीता मृगवनीता बनी तू
मृगशीरा नक्षत्र नभ में आज तभी ॥

विश्रुत विश्रवा ऋषि विमन किया तू

विस्मृत हुआ तेरी उपासना,
सीमा लंघन किया, अंगी किया
अनंगरंगरंगित निजांगना ॥

हिरण्य कशिपु बपु बिदारित की थी

मोहित कारिणी धरी बपु नरहरि के,
 अबला ! तू सबला है, भामिनी !
 मोहिनी है तेरे बश में अखिल जन जग के ॥

अयी शोभामयी, मोहमयी, कुहुकिनी, कुंदहासिनी
 तेरी विस्मृति में ही बनेगी वृत्ति मेरी
 निर्द्वन्द्व-आनंदघन रूप नवघनमुक्त विभावसु
 दृश्य दर्शन द्रष्टा त्रिपुटिको भृकुटी में

मिटेगी मोहमयी विभावसु
 लय कर भयहीन बनूंगा
 द्वन्द्वकारिणी संध्याराणी ! भयहारिणी बन
 जग में जश बना रहेगा ॥

टिप्पणी :-

मनोरमा	-	सौंदर्य
रमारमण	-	बिष्णु
नारद	-	चंचल पद वाले ऋषि राग
राग	-	आनंद, स्वर
द्रवित	-	गलजाना
पाप-चाप-कटिन-पाहन-हिय		पाप के दबाव से कठिन हुआ पत्थर रूपी हृदय
कंज-चरण-कंज	-	कमल पद रूपी कमल
बेला	-	तट, सीमा
नवधन..... हो गया	-	ध्यानस्थ हृदय के घनश्याम-कृष्ण, मानो नवघन (काले बादल) के अंदर
मिल गये	-	संध्याके शोभा देखते ध्यान टूट गया ।
चपला	-	बिजली
चपल नयन	-	कृष्ण
शर्वरी	-	रात्री
पितामह अज	-	ब्रह्माजी
मृगवनीता	-	हिरणी
मृगशीरा	-	नक्षत्र

- कथा इस प्रकार है कि संध्या की शोभा में मोहित होकर ब्रह्माजी उसके पीछे पकड़ने के लिये भागे तो संध्या हिरणी बनकर आकाश में कुद गई थी। ब्रह्माजी हिरण बनकर पीछा किये थे। मर्यादा रखने के लिये शंकरजी ब्याधरूप लेकर हिरणरूपी ब्रह्माजी को सर संधान किये थे। ब्रह्माजी तब हिरणरूप त्यागकर प्रकृतिस्थ हुये। आज भी आकाश में मृगशिरा नक्षत्र इस कहानी की स्मृति जगाती है।

विश्रुत	-	विख्यात
विश्रवाऋषि	-	रावण का पिताजी
विमन किया	-	अन्यमनस्क किया
अंगी किया	-	आलिंगन किया
रति आर्ती	-	संभोग करने को आतुर
अनंग रंग रंगित	-	कामातुर
निजांगना	-	अपनी पत्नी
हिरण्य नरहरि के	-	मानो संध्या ही नरसिंह रूप लेकर सायं काल में हिरण्यकशिपुको मोहित करके विदारित कर दी थी।
कुहुकिनी	-	जादुगरनी
कुंद हासिनी	-	कुंद पुष्प के तरह जिसकी हंसी
तेरी विस्मृति में.... विभावरी	-	संध्या को भूल जाने से ही ब्रह्मवृत्तिवनेगी
विभावसु	-	सूर्य
विभावरी	-	रात्री
द्वन्द्व कारिणी	-	द्वेतवननेका कारण वाली
भय हारिणी बन	-	दो में भय होता है। अतः संध्या ! अपना अस्तित्व को मिटा कर मेरी अद्वेत ब्रह्मवृत्ति बनने में मदद करके मेरा द्वेत रूपी भय को दूर कर दे।

राधे-कैसे करें श्रृंगार

मधुर मुरलीया बाजे
कौन करे श्रृंगार
राधे कौन करे श्रृंगार ।

तन मन सुधी नाही
बदन बिलसे नाही
चित्त में व्याधी अपार
राधे कैसे करे श्रृंगार ।

केश कलाप बीखरा जु मन सो;
नयन ही नीर अपार,
अंग अंग फडकत - दिल धड़के;
कछु सुझत नाही लगार,
राधे कैसे करे श्रृंगार।

लेंघो परन्यो पीरो पीताम्बर सों;
अंग श्याम कंचुकी उधार,
ओढी चुनरीया मोहीनी मदभर;
वेश बन्यो बेसुमार,
राधे कौन करे श्रृंगार ।

टीको मृगमद माथे सोहन;
कुंडल फलक अपार,
नाक चीबुक सुनी झिलमिल
फलकत; कंठ नोलखो हार
राधे कैसे करे श्रृंगार ।

बाजुबंद पे निलर्माण बांध्यो,
कर कंकण झनकार,
दामीनी बंधन उन्नत उरज पे;

कटीमेखला रूप धार,
राधे कैसे करे शृंगार ।

फूली चंपक करणी जु;
चली राधिका सुधबुध भूली;
नुपूर इव न घरार !

अगन जगी एक विरह वेदना
हिरदेश श्याम विचार
श्यामा श्याम सौं मिलन को घाई
रूप शृंगार भूली - निसार
राधे ऐसे किन्हो शृंगार !

दिल की दर्द

दर्द भयो अंजाना,
वेद कहे रोग है पुराना !
मर्ज कहूं समझि नहीं आवैं,
नीम हकीम कछु काम नहीं आवैं !

समझी बुझी कहो ना ही आवैं
नीम हकीम कछु काम नहीं आवैं
बढि गयो मर्ज नहि कछु होश ठिकाना,
वेद कहे रोग है पुराना !
इतना ही कहूंगा ठिकाना वेद कहे रोग है पुराना !

प्राण जाए छोटे अफसाना
दर्द भयो अंजाना !

मरहम भेजी थी दिहिन भगवाना,
मर्ज चिन्ह कृष्ण मस्ताना !

दर्द मिटियो मिलियो मस्ताना,
झूम उठियो गाय रहयो दिवाना !

प्रभु आये

ठुमक ठुमक पग
कुमक कुंज मग
चपल चरण हरि आये
मेरे प्राण लुभावन आये
मेरे नयन लुभावन आये

निमिक झिमिक झिम
निमिक झिमिक झिम
नर्तन पद ब्रज आये
मेरे प्राण भुलावन आये
मेरे नयन लुभावन आये

अमल कमल कर
मुरली मधुर धर
बंसी बजावन आये
मेरे प्राण भूलावन आये
मेरे नयन लुभावन आये !

आनंद

प्रभु प्यारे से जिसका संबंध है !
उसे हरदम आनंद ही आनंद है !!

झूठी ममता से करके किनारा !
लेकर सच्चे पिता का सहारा !!

जो उसकी रजा में रजामंद है !
उसे हरदम आनंद ही आनंद है !!

दीन दुखियों के दुख हो जो बांटे !
सेवक बन भला सबका चाहे !!

जिसमें घमंड ना पाखंड है !
उसे हरदम आनंद ही आनंद है !!

जिसकी कथनी में कोयल सी चहक है !
जिसकी करनी में फूलों से महक है !!

प्रेम जीवन ही जिसका सुगंध है !
उसे हरदम आनंद ही आनंद है !!

भजन

कृष्ण गोविन्द गोविन्द, गोपाल नन्दलाल
कृष्ण गोविन्द गोविन्द गोपाल नन्दलाल ।

हे गोपाल नन्दलाल हे गोपाल नन्दलाल
हे गोपाल नन्दलाल हे गोपाल नन्दलाल ।

अंधकार मीटा देना प्रकाश ला देना
कहीं ठोकर खाकर के ये बच्चा, गीर नहीं जाना।

हाथ थाम लेना, इसे छोड नहीं देना
अति दूर कहीं जाना इसे संभल के ले जाना।

है नन्हासा ये बच्चा, हाथ पांव इसको कच्चा
आता नहीं इसे चलना, दिल इसका है सच्चा।

कहीं कांटे है कहीं कंकर, कहीं कुत्ते,
भूत भंयकर कहीं खड्डे कहीं नाले इसे छोड नहीं देना।

सीखा नहीं कैसे बोलना, क्या बोलना क्या नही बोलना
क्या करना क्या नहीं करना, अपना पराया न जाना।

गीर जावे तो उठा लेना जरा प्यार से सीखाना
होती रहती है गलतियों, प्रभु माफ इसे कर देना।।

चिदानन्द षटपदी

-गणेशपुर आश्रम का स्तंभ

१- यह अमर गाथा गाया है दुनिया
अमर आत्मा चिदानन्द का
अमर बनेगा गायेगा जो
यह अतुल गुणगण गुरुवर का

२- जो अभयदिया सदा सबको
वह उभय साकार निराकार हुआ
सदानन्द आनन्द दिया सबको
चिदानन्द हूँ मस्त गाया ।

३ - गुरुमहाराज जो गुणातीत है
जन-हित त्रिगुण मूर्त हुआ
त्रिमूर्ती अवतार दत्तात्रेय रूप
समन्वय - योग जग पाया

४- जो पुराण शास्त्रों को रूप दिया
राह दिखाया लक्ष दिया
जो जीवन जीया उसने,
सब तो नवल इतिहास बन गया

५- चिंतामणि वह जनगण मन का
सर्वभूत - हित - निरत रहा
दीन दुःख हनन उसका
क्रीडा रहा बिलास रहा

६- आज यह शुभ दिन शुभ घड़ी है
यह स्मृति स्तम्भ हुआ स्थापना
युग युग के लिये षट्कोण - षडांग योग
जीवन दर्शन दर्पण बना ।

ॐ ॥ गंगणपतये नमः ॥ ॥ ॐ सरस्वत्यै नमः ॥ ॥ सदुरु परमात्मने नमः ॥

गुरु पाद पूजा

(गुण) - जो गुरुवर के गुण गाया रे
सो भव-सागर तर पाया ।
गुरुदेव दिव्य-गुण अनन्त हैं,
जीवन के अंत पाया ।
जीवन के फल पाया रे
सो जीवन के फल पाया
सो जीवन सफल बनाया ॥

(नाम) - गुरुवर का जो नाम जपा है
चरण में तन-मन सौंपा...
जप यज्ञ-कोटि फल पाया रे।
आचरण कर दिखलाया..
गुरुवर का गुण गाया ॥

(रूप)- गुरुवर का दिव्य रूप जो ध्याया
माया रूप मिट गया रे,
गुरु का रूप सब में समाया
गुरुवाणी सुन पाया
गुरुवर का गुण गाया ॥

(मन-वचन-कर्म)- गुरुवर को जो मन में बसाया
वाणी में गुरु-गुरु गाया रे,
गुरु का आदेश आचरण किया जो
गुरु चरण में समाया
गुरुवर का गुण गाया ॥

(पाद-पूजा)- भाव भरा सो नयन नीर से
गुरूपद प्रक्षालन किया र॥

- (चंदन)- मन को निरंतर घीस-घीस कर
चंदन लेप लगाया रे।
गुरूनाम सुगंध सुमन है॥
- (माला) - जो चुन-चुन माला बनाया रे।
- (धूप) - गुरूवाक्य-मंत्र मनोहर
सुगंध धूप फैलाया रे॥
- (नैवेद्य) - तन-मन-धन का नैवेद्य लगाया
परमानंद फलपाया
यही है गुरूवर पाद-पूजा
इसी में मन समाया ॥
- (दीप) - पंचप्राण का दीप जगाया
ध्यान आरती उतारा रे।
गुरूवर गुण-गण गाया
त्रिविध संताप मिट गया
वह गुरूचरण में समाया ॥
- फिर से फिर न कभी आया रे
त्रिदेव पूजित पद पाया रे।
गुरूचरणमन लाया
जीवन सफल बनाया रे॥

प्रार्थना

हे ईश !

हे ईश ! प्रार्थना बस मेरी एक प्रेम किरण
उद्दीप्त हो श्रद्धा मेरी, टूटे अंधकार स्वप्न
सोया रहा मैं बरसों, झूठा मेरा माया-मन
अचेत इस मन में, कैसी थी यह भटकन
चित्त स्थिर ना मेरा, खो गया मेरा चिंतन
कैसे बिछुड़ गया, आना तेरे आंगन
गुम हो गई राह, फैला अंधकार सघन
उबारो हे ! नाथ मेरे, तोड़दो यह भ्रामक दर्पण
हे ईश ! प्रार्थना बस मेरी एक प्रेम-किरण
उदित हो श्रद्धा मेरी; टूटे अंधकार-स्वप्न !

छला गया मैं नित, क्या मार्ग मेरे ईश्वर
प्रतीती हो रहा, जैसे धुंध में भटकन
इतना तो ज्ञात मुझे, है जीवन का प्रयोजन
अब चेता, भगवन करो मुझमें प्रेम संचारण
जगा दो क्रांति नयी, करो मुझमें लगन सृजन
हे ईश ! प्रार्थना बस मेरी एक प्रेम-किरण
जग जाए श्रद्धा - विश्वास तुझमें; मिटे रात, अरु स्वप्न !
बास. एक. प्रेम किरण !

तोते

ओ मेरे तोते ! सून लो बातें
पिंजड़ें मे तडफो मत !

फडफडाएं तो पंख टूटेंगें
कुछ भी न लाभ, चुप; रोना मत ॥

पिंजड़ा सोने का या लोहे का है
सब समझ मे आयेगा

बात मेरी समझ सके तो
खुले गगन मे उडेगा ॥

बरषा वारि, बादल काले,
पथर पर जा गिरा था।

ज्ञान बताया, हाय !
मुख को सिर ही हिला रहा था ॥

फिर भी बार बार करत प्रयास
जडमति होत सुजान ।

शिला पर शीतल जल-धार
आंकता है निशान ॥

गुरु कृपा से आता है समझ
समझ है प्रकाश का रेख ।

गुरु वचन सुधासम पी-ले
बहता कृपा धारा देख ॥

रट ले तोता जय श्री राम
बढ़ जायेगा तेरा भाव ।

द्वार खुलेगा, नीड़ मिलेगा
क्षितिज मिलन की चाह ॥

रट ले तोता जय श्री राम
राम कि महिमा अपार ।

फिर भी बोलता हूँ
रट ले प्यारे
राम करेगा बेड़ापार ॥

गुरुवर - आपका मुस्कान

गुरुवर जब आप के मुख में मुस्कान देखा,
दुख भरी जिंदगी में मुस्कुराना सीखा ।।

जब कमलिनी सूरज का मुस्कान देखा,
तब अधखिली कली तो खिलना सीखा !!

काले घने घट्टाओं ने आपका मुस्कान देखा,
तब दामिनी दमका, मेघ मुस्काना सीखा !!

आपका हंसते जगत जागना सीखा,
वायु बहना सीखा, ज्वाला जलना सीखा !!

आपका मुस्कान से चंदा चमकना सीखा
तारे भी झिलमिलना, झरना कलकल गाना सीखा !!

आपका मुस्कान समयको दौड़ते देखा,
कोयल को गाते, मोर को नाचते देखा !!

ऋतुराज के अधर में नवपल्लव लालिमा,
उषाराणी के गले में नवमल्ली का माला देखा !!

आपका मधुर हास्य दर्शन को दृष्टि दिया (शास्त्रोंने),
यह जीवन में शिवको अरु रूपोंमें अरुपवान् देखा !!

गुरुवर यही वर दो हमें, आपका मुस्काना देखते रहे,
लड़ते रहे जीवन का संग्राम, आपके चरणों में हंसते हुए मिल जाएं !!

नियति की निति निराली

नियति कि निति निराली है
नियति कि निति निराली है
हमें समझ न आया
होना था कुछ हो गया कुछ !
उलट-पलट कर गया !!१!!

अनुज के साथ पासा खेलने में !
नल राज्य हार गया
छोड़े राजपट नल दमयन्ति !
नसीब को जंगल भाया !!२!!

दिया था राज, पिता रामको
बीच में भरत को लाया !
सीता लक्ष्मण साथ राम को
वन वन खूब घुमाया !!३!!

राजा युधिष्ठिर द्रोपदी के साथ !
राज्य संपत्ति सब खोया !
राज दुर्योधन को, वन पांडव को
वार बरष क्यों दिया ? !!४!!

विधि विपरीत, निति क्यों नहीं ?
हमें समझ न आया
निति-नियति का कलह यह
उलझ क्यों; सुलभ न रहा ? !!५!!

होलिका के गोद बैठा प्रह्लाद
भस्म होलिका हो गया
उसका जो है, उसको बचाया
ब्रह्म-वर काम ना आया !!६!!

जला रावण त्रिजग-विजेता
राज विभीषण पाया !
भक्ति भावभर नीच राक्षस
रामचरण मन लाया !!७!!

देखा सब कुछ सोचा सब कुछ
अंत में समझा यह आया
उसी का जो, हो गया भाई !
उलझन सुलझ सब गया !!८ !!

मौन क्यों ?

मौन क्यों यह पवन ?
मौन क्यों यह गगन ?
मौन क्यों यह धरा ?
मौन क्यों यह कण-कण ?
जिससे बना पर्वत बड़ा ?
मौन क्यों यह खामोश खड़ा ?
मौन क्यों यह हवा ?
जिससे हर शरीर खड़ा !
आखिर क्यों यह सब ?
तनिक प्रेमी समझाओ जरा !
मौन क्यों हर दिशा,
मौन हर वन उपवन,
मौन अपारमौन है सबका मौन,
मौन है सूरज मौन है अंधकार,
मौन की महत्ता समझता वहीं,
जिस पर कृपा करें खुद चीर-मौन !
मौन यह सारी प्रकृति,
और मौन इसका अभिनंदन !
मौन बन चले आओ,
कब से सुना, तुम बिन आंगन !
मौन न मुझ पर थोपो,
अपना चंचल मन !
तनिक विचारो, पाते,
खोते मौन सब,
फिर क्यों भटके ?
मौन हो जाओ जरा सारा जीवन !
अब तो चेतो ध्यान लगाओ कैसा मेरा आंगन !

मौन मन से तेरा संदेश, मौन मिलता है कभी
पलके बिछाए, दिख रहा, देख रहा हूं,
आश लगी है कि होगा -तेरा मौन आगमन ।

ॐ श्री गंगायै नमः

गंगा आगमन गाथा

हे अम्ब ! अब अवनी अवतरण मन भाई ।

हे माँ ! अब तুম धरती पर उतरने की मन बनाई ॥ १ ॥

पापतापतापित जनकदम्ब कल्याण कारिणी !

भक्तमनमानस हंसिनि ! भगीरथभाग्यभूषण कारिणि !

तपताप द्रवित द्रवरूपिणी !

विष्णुपदी ! तजि विष्णुपद, विष्णुपद में चरणकी प्रसारण ॥ २ ॥

हे पाप के ज्वाला से जलते हुए जन समूह का कल्याण करने वाली माँ !

हे भक्तों के मनरूपी मानसरोवर में विहार करने वाली हँसिनी !

हे भगीरथी के भाग्य को अलंकृत करने वाली !

हे (भगीरथ आदि की) तपस्या के ताप से द्रविभूत होकर जलरूप धारण करनेवाली !

हे विष्णुपदी गंगे ! तुमने विष्णुपद को त्याग कर आकाश (विष्णुपद) में पदार्पण किया।

जब प्रबल प्रभंजन प्रताडित प्रेरित ;

तव कल्लोल वीचीबल्लरी वियद लहराई;

विचित्र चित्र वह फेनोदगम रुचि ;

रचि अगणित चपल तारागण ॥ ३ ॥

जब तुम्हारी उच्छलती कुदती हुई तरंगरूपी लताएं प्रबल वायुवेग से आघात पाकर तथा प्रेरित होकर आकाश में लहराने लगी, तब लहरों के टकराव से उत्पन्न फेनोंका विचित्र मनोरम दृश्य अनगिनत चंचल ताराओं की मानो रचना कर दी हो।

हुआ प्रतीत, प्यासी वसुधाहित

बारंबार झंकृता अम्बर कल्पलता कंपन ॥ ४ ॥

ऐसा प्रतीत हुआ मानो प्यासी धरती के लिये आकाशरूपी कल्पलता अपने आपको बारम्बार झकझोर रही थी।

किंबा, भ्रमवश, भैरवी नभकेशी, करलिये असी;
प्रलयकालमानी, महाकालसंग करे नर्तन ॥ ५॥

अथवा भ्रमसे आकाशरूपी केशवाली देवी काल भैरवी हाथों में खड्गलेकरप्रलयकाल आगया,
ऐसामानकर महाकालके साथ नाच रही थी।

अथवा विधाता, मानो गगन उपवन में;
मल्ली सुमनसंकुल उपजाई ॥ ६ ॥

अथवा ऐसा लगरहा था कि सृष्टिकर्ता ने मानो आकाशरूपी बगीचा में अनेक मल्ली फूलों की रचना कर दी
हो।

सुनील नभ में धवल तरंग तव ऐसी छटा बनाई;
मानो कुंचितकुंतल कृष्ण,
गोरी गोपीगणसह महारास रचाई ॥ ७ ॥

नील आकाश में तुम्हारे सफेद तरंगें ऐसा चित्र बनाया था कि मानों अनगिनत गोरी गोरी गोपीओं के
साथ घुंघराले बाल वाले कृष्ण महारास क्रीडा रच रहे हों।

नीलाम्बर से,
श्वेताम्बर, मणिमुक्ताखचितमुकुटवर शोभिनी;
करकुंभ कमल माला अभयवर धारिणी;
अति प्रखरवेगधर मकरवर पृष्ठ आसिनी;
शंखशुभ्र तरंगिणी, काम रूपिणी देवी अवतरी ॥ ८॥

नील आकाश से श्वेत वस्त्र, मणिमुक्ता से शोभित श्रेष्ठ मुकुट तथा हाथों में-पूर्णकुंभ, कमल-माला, तथा
अभयवर धारण करनेवाली, अतिवेगगामी श्रेष्ठ मगरके पृष्ठमें बैठी हुई, शंखकी तरह सफेद तरंग वाली,
ईच्छानुसार रूप धारण करने वाली देवी अवतरित हुई।

दुरितारि तरंगधारी, झंकारकारी, हरिपदरजोपहारी;
सुरसरीवारि मनोहारी, न्यारी, निहारी नभचारी;
हिय हरषि, सुमनराशि बरषि, बारि बारि
नट-नारी स्वागत संगीत उचारी ॥ ९॥

दुस्कर्माका शत्रु रूप तरंग वाली, झंकार करती हुई गंगा जो भगवान श्रीहरि चरण रज रूपी उपहार (धरती के लिये) थी, उसकी विलक्षण शोभा को देखकर, आकाशचारी देवता, सिद्धऋषिमुनिगण, आनंदित हो उठे तथा बारी बारी से पुष्पवृष्टि करने लगे। दिव्य नर्तकियों (अपसरागण) गंगाजी के स्वागत संगीत गाने लगे।

वह प्रचंड प्रवाहवेग धारण कारण;
शशीभूषण पंचानन, अतिसावधान;
जटाजाल किये जृम्भण ॥ १०॥

गंगाजी के उस तीव्र प्रवाह के वेग को धारण करने के लिये पंचमुख वाले चंद्रमौली शंकर भगवान अति सावधानी के साथ अपनी जटा समूह को प्रसारित किये, तथा गंगाजी को धारण करने से, गंगाधर नाम से प्रसिद्ध हुए।

किंतु हाय !
अति विशेष पारस-परस सम, हितकर, शीतलतर मानी;
विषकंठ अवढरदानी, मन मुसकाये;
भगीरथ मनोरथ विसराये; विषम समाधि किये आमंत्रण ॥ ११ ॥

किंतु हाय ! अफसोस की बात है कि विषकंठ वाले, सबको अभय देनेवाले शिवजी, गंगाजी के स्पर्श को स्पर्शकांतमणि के समान मान करके (कंठमें विष धारण करने से विष की ज्वाला को शांत करने के लिये चंद्रमासे ज्यादा शीतल समझकर) हितकर माने, और मुस्कारकर आनंदित हुए, भगीरथ की मनोकामना भूल गये तथा असाधारण भाव से समाधिस्थ हो गये।

तुम तो जननी ! अति मति भोलिनी;
भोला-भाल विमल, विशाल, जटिल जब पाई;
वहिर्गति मति न जगाई; मानो जटाधर-जटाटवी मन भाई;
जटा समाई, जटाशंकारी कहलाई ॥ १२॥

हे माता ! तुम तो मन की अति भोली भाली हो। तुमको भी भोलेनाथ के जटावाला मलरहित विशाल मस्तक रमने के लिये मिल गया तब तुमने जटाजूट से बाहर आनेका विचार त्याग दिया। मानो तुमकोशंकर जी का मनोरम जटारूपी जंगल विहार करने के लिये पसंद आ गया हो। तुम वहीं रम गई और जटाशंकरी नाम से विख्यात हो गई।

यथा भवाटवी भ्रमित, दुःखार्त, पथक्लांत
विरत तापस यति, परमगति पाया,
अथवा, अकिंचन राकारंजन कल्पतरूतल आया;
तथा तुम विह्वल, विस्मरण की धरा अवतरण ॥ १३॥

जैसे संसाररूपी अरण्य में भ्रमण करते हुए दुःख आतुर थकामांदा कोई अनासक्त तपस्वी संन्यासी को परमशांति मिल गई हो, अथवा कोई अत्यंत निराश्रित पूर्णिमा चन्द्रमा की आशा रखने वाला महादरिद्रकोकल्पतरु मिल गया हो। वैसे माता ! तुम आनंद विह्वल होकर धरती पर उतरना भूल गये।

हताश भगीरथ, विगत मनोरथ, पुनः उत्साह जगाये,
सदाशिव-स्तव गाये ॥ १४॥

भगीरथ हताश तथा विफलमना होते हुए भी पुनः प्रोत्साहित होकर (प्रयास जारी रखे तथा) भगवान सदाशिव की स्तुति की।

शिव आशुतोष नाम ध्याये ;
दिलीपसुत मनवांछित वर पाये ॥ १५॥

भगवान सदाशिव अपने आशुतोष नामका स्मरण किया अर्थात् शीघ्र ही भगीरथ की मनोकामना पूर्ण कर दिये।

वरदान वचन जननी मन जागी ;
क्षिति - क्षालन ईच्छा मन पागी;
मानो योग भ्रष्टकोई विषय अनुरागी ॥ १६ ॥

माता गंगाजी के मन में भी भगीरथ को दिया हुआ वर की बात (मर्त्यभूमि पर पधारने की) स्मरण हो आई। जैसे कोई योग भ्रष्ट योगी विषयों में आसक्त हो जावे वैसे, धरतीपर पाप को धो डालने की ईच्छा माताजी के मन में रसीली हो उठी।

शिवजटाजूट अंशेन विहाई ;
धराधरवर सदन सुहाई ॥ १७॥

भगवान शिवजीके जटाजूट को एक अंश से त्याग कर (धराधरवर) गिरिराज के घर की शोभा (गंगाजी ने) वर्धन की, अर्थात् हिमालय पर प्रगट हो गई।

आल्हादिनी, कलकल नादिनी, अद्रिजा उमा - अग्रजा ;
आज गिरिराज अजिर इत उत धाई ॥ १८ ॥

गिरिराज हिमालय को आनंद देनेवाली, पर्वत पूत्री जो उमाकी बड़ी बहन है। आज कलकल गाती हुई
हिमालय के आंगन में इधर उधर दौडनेलगी। (प्रवाहित हुई)

भगीरथ दिव्यरथ अनुगामिनी;
जन्हु आश्रम आई, जान्हवी कहलाई ॥ १९ ॥

राजा भगीरथ के दिव्य रथ का अनुसरण करती हुई गंगाजी जन्हु आश्रम में पहुँची और जान्हवी नाम से
प्रख्यात हुई।

प्रपातोप्लुता, कल्लोल कोलाहल कृता ;
भूधरवर वक्ष प्रक्षालिता भागीरथी ;
अंगीकृता वारुणीअरू अशी;
वह सुशोभित, शैलप्रान्त, वारुणावत ;
विश्रुत हुआ वारणासी काशी ॥ २० ॥

अति उत्तम मानी, मुक्तिदानी, कैलासी बने काशीवासी ;
यह मोक्षदा उत्तरकाशी, पुराण पृष्ठ परकाशी ॥ २१ ॥

इस स्थल को अति उत्तममानकर सबको मुक्ति देने के लिये, कैलाशमें वास करने वाले भगवान
कैलाशीकाशीवास करने लगे। यह मोक्ष प्रदान करने वाला तीर्थराज उत्तरकाशी की महिमा पुराणों के पन्नों को
उज्ज्वल करने वाली है। अर्थात् पुराणों में वह धा वर्णित है।

आनंददायिनी अलकनंदा, मंदहासिनी मंदाकिनी,
धवलतरंगा गंगा देवप्रयाग मिले एक संग;
सप्तसरोवर रूपा, आश्रम की पावन,
सप्तऋषि अभिवादन, विहारी मायापुरी, हुई अग्रसारी ॥ २२ ॥

बद्रीनाथ से प्रगट होने वाली आनंददायिनी अलकनंदा, केदारनाथ से प्रगट होने वाली मंदमंद मुस्कराती
मंदाकिनी देवप्रयाग में सफेद तरंगवाली गंगाजी साथ मिले। यह मिलितरूप गंगा आगेचलकर सप्तसरोवर रूप

धारण करके (सात धाराओं में बंटकर मरिचि, अंगिरा आदि सप्त ऋषिओं को प्रणाम करके उनके आश्रमों को पवित्र किया। मायापुरी (हरिद्वार) भ्रमण करके फिर आगे बढ़ी।

जन किये याचन निजकल्याणकारण, शंकर कृत अनुमोदन ;
की स्थापन मोक्षकारण, काशी प्राची ॥ २३॥

अपने कल्याण के लिये जब मर्त्यलोक वासी प्रार्थना किये, तब भगवान शंकरजी की स्वीकृति के अनुसार लोगों को (मरणोपरांत) मुक्ति देने के लिये गंगाजी पूर्वकाशी की स्थापना की। प्रकृतिराणी (भगवान शंकर का प्रिय वासस्थान मानकर उस भू भाग में) तीर्थराज काशी के रुचि के अनुसार मन को हरण करने वाली सौंदर्य रचना की।

तब आई परम सखी सरस्वती,
अपर हंसमुखी हंस - दुहित्री;
प्रयाग हुई संगम, गंगा करी आलिङ्गन, अति हर्षमति ॥ २४॥

तदुपरांत गंगाजी सखी सरस्वती तथा हंसमुखी सूर्यसुता यमुना का आगमन हुआ। गंगाजी अति आनंदपूर्वक प्रयागराज में उन्हें आलिङ्गन करके सब एक रूप हो गये।

अतिगुप्त तत्त्व यह संगम;
इडा पिंगला सुषुम्नेति, यमुना गंगा सरस्वती;
यह ईगित शास्त्र सम्मत ;
नाडी चक्र भेदिनी, सर्व प्राणी हृदयस्पंदिनी;
विभिन्न प्राण रूपिणी, गाये, योगेश्वर, निगमागम ॥ २५॥
यह संगम अति गुप्त रहस्यों से भरा हुआ है। यह शास्त्र सम्मत नाडीचक्र भेदन कर शरीर में प्रवाहित होते हैं। ये विभिन्न प्राणोंका रूप ऐसे वेदशास्त्र तथा योगीराजों के द्वारा गाया गया है।

नाना नदी, तीर्थ आदि पूजिता, तीर्थमयी तट तीर्थीकृता ;
जन कल्याण कारण, दिन्ही अंक आश्रय अखिल मुनि आश्रम ॥ २६॥

नाना नदी, तथा तीर्थ आदि से पूजित होकर तीर्थस्वरूपिणी गंगाजी, अपने उभय तटों को तीर्थों में परिणत कर दी तथा जनकल्याण के लिये अनेक ऋषिमुनिओं के आश्रमों को अपनी गोद में आश्रय दिया।

सुरनर मुनिगण नंदिता, भा रता, सकल कामना कल्पलता ;

स्नेहमयी माता, वसुमती वक्ष की प्लाविता ॥ २७॥

देवता, मानव तथा ऋषिमुनिओं को आनंद देने वाली प्रकाशमयी, समस्त कामनाओं की पूर्णकरने वाली, कल्पलता तुल्य, स्नेहमयी माता, धरती के वक्ष को जलमय कर दी। (पापों का प्रक्षालन कर दिया)

अन्ततो गत्वा -

कपिल मुनि तिरष्कृत सष्टिसहस्र सगरसुत,
स्वकर्म भष्मभूत; पियुषुमय पयस्पर्शमात्रेण स्वर्गकिये प्राप्त;
मानो त्रिदेव आशीर्वादित ॥ २८ ॥

अन्त में कपिल मुनि को अपमानित कर अपने ही कर्म से राख बने हुए सगर के साठ हजार पुत्र (गंगाजी) अमृत तुल्य जलका स्पर्श होते ही स्वर्ग सिधार गये। मानो त्रिदेव (ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर) से आशीर्वाद मिल गया हो।

चिरकाल उपरांत, भष्म स्पर्शमात्रेण;
यदि हो संभव स्वर्गारोहण;
तो श्रद्धाभक्तिपूर्ण मानस जो नर करे;
सुरसरी सेवन, जलपान, मज्जन, पूजन,
अर्चन; क्यों न हो संभव शमन समन उपशमन ॥ २९॥

चिरकाल के पश्चात अगर भष्मका भी गंगाजल स्पर्श होने से जीवका स्वर्गप्राप्ति संभव हो सकता है तो श्रद्धा भक्ति भावसे गंगाजल सेवन, गंगास्नान, गंगाजलपान तथा गंगा जी का अर्चन, पूजन, करने से (शमन-समन) यमराज का आदेश (मृत्यु) को शांत क्यों नहीं किया जा सके? अर्थात् नरक यंत्रणा का उपशमन अवश्य संभव है।

हे विवेकी जन!

करो अनुमान, अनुसंधान, अनुमोदन, अनुष्ठान;
निज कल्याण कारण ॥ ३०॥

हे विवेकवान मानव! इससे अपना कल्याण का कारण अनुमान करो, खोजो, स्वीकार करो तथा उसका पालन करो। अर्थात् अवश्यमेव कल्याण कारिणी गंगाजीका सब विधि (काय मन बचनसे) सेवन करो।

सृष्टि आरंभ, यज्ञ किये उत्पत्ति प्रजापति;

बोले हे संतति !

कामधेनु यह, करो, परस्पर, सर्वकाम पुरण ॥ ३१॥

सृष्टि के आरंभ में प्रजापति (ब्रह्माजी) यज्ञ को उत्पन्न करके (देवता मानव आदि) प्रजासे बोले कि यह समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाली कामधेनु है।

उस कामद यज्ञ समापन कारण;

अंशुमान, दिलीप, भगीरथ, किये थे तपाचरण ॥ ३२॥

समस्त इच्छाओं को पूर्ण करने वाला यज्ञ का समापन करने के लिये अंशुमान, दिलीप, भगीरथ आदि (तीन पिढ़ी तक) तप किये थे।

तभी, मर्त्यपर, ब्रह्मलोक से ब्रह्मसुता का हुआ पदार्पण ॥ ३३॥

तभी ब्रह्माजी की पुत्री गंगाजी ने ब्रह्मलोक से इस मर्त्यमंडल में पदार्पण किया था। अर्थात: गंगाजी की महिमा कामधेनु तुल्य से भी अत्यधिक है।

पतिपदरज मानी, हीराहारसम धरा की धवल धारा धारण;

तन आवरण, शस्य श्यामल आस्तरण ॥ ३४॥

हीरा की माला के समान यह श्वेत जलधारा को पृथ्वी (अपने वक्ष में) पृथ्वीपति भगवान श्रीहरि का पदरज मानकर धारण की तथा अपने शरीर को (गंगा प्रवाह के कारण) शस्य श्यामल चद्दरसे ढक ली।

सगरसुत कृतगर्त किया पूर्त, सागर हुआ प्रख्यात ;

मेदिनी मेखलीकृत अनायास आचरण ॥ ३५॥

वह धारा सगरके पुत्रों से (यज्ञ अश्व को ढूँढने के लिये धरती को खोद डालने के कारण) किया गया गड़्डा भर दिआ। वह सागर का जल है। गंगाजी का यह सहज आचरण धरती को कटीसूत्र के भांति घेर ली।

मातः ! तवजल महिमा निगमे ख्यातः ;

चिरकाल गाये, सहस्रमुख अनंत, शारद नारद आदि ऋषिसप्त;

महिमाका नहीं अंत ॥ ३६॥

हे माता ! तुम्हारी जलकी महिमा पुराणों में प्रसिद्ध है। चिरकाल तक अपने सहस्र मुखों से अनंत, खुद सरस्वती, नारद तथा सप्तऋषि आदि तुम्हारी महिमा गान करते हुए अंत नहीं पा सके।

हलाहल विषज्वाला शमन, भवभाल भूषण, भव भय हरण,
त्रिताप - निवारण, यज्ञ आहुति समापन, पापी पाप प्रक्षालन;
जगज्जन - अशेष आशापूरण, पालन, पोषण, भक्ति मुक्ति प्रदान;
अबाध अखंड हरिहर अजगुणगान, प्रसारण कारण, हुआ;
गोवक्षपर गंगा- आगमन ॥ ३७ ॥

भयंकर विषज्वाला को शांत करने के लिये, शंकर भगवान का मस्तक का अंलकार बनने के लिये, संसार का भयहरण, आध्यात्मिक, आधिभौतिक तथा आधिदैविक तापत्रय निवारण, यज्ञ का समापन, पापीओं का पाप हरण, संसार के लोगों का आशापूर्ति, पालन पोषण, भक्ति मुक्तिप्रदान, अबाध अखंडहरी गुण गान, प्रसारण कारण, हुआ गंगाजी का धरती पर आगमन।

अम्ब ! पद - अम्बुज आश्रय दो, तव अवोध सुत किया प्रार्थना ॥ ३८ ॥

हे माता ! तुम्हारे एक अबोध संतान, चरण कमल में आश्रम के लिये प्रार्थना किया ।

हे दिवांगने ! करुणावरुणालया - स्नेहमयी - सुमने !
प्रार्थना की स्वीकृत, शिशु उपकृत, कितुं सुप्त भव भ्रमव्यथित ;
जगादो, बतादो पथ, करो अंत, जनन मरण जात- यातना ॥ ३९ ॥

हे प्रकाशमयी, सुन्दर अंगवाली, दयाकी समुद्र, उत्तम भाववाली, स्नेहमयी माँ ! तुमने प्रार्थना तो स्वीकार कर ली। (फलस्वरूप तुम्हारा पुत्र तुम्हारी गोद में बैठा हुआ है।) इसलिये तुम्हारा बालक उपकृत है। उसे जगादो, मार्ग बतादो तथा जन्ममरण रूपी संसार से उत्पन्न दारुण दुःखका अंत कर दो।

वह कैसे ?

भुवन भुवन हो, बन जा वनजात मात ! बनू पत्र में तेरे ;
सलिल संग असंग रहूँ, रंगजाऊँ पराग से तेरे ॥ ४० ॥

कैसे मुक्ति दोगे ? कि संसार अगर जल हो, हे माता ! तू उसमें कमल बन जा, और मैं तेरे पत्र बन जाऊँ (अर्थात् तेरे छाया में तेरे चरणों में सदा रहूँ) तथा संसाररूपी जल में (कमल पत्र के भाँति) सदा अनासक्त रहूँ। तू (कमल) जब खिल जायेगी, तेरे से गिरताहुआ पराग से मैं (कमलपत्र) रंगजाऊँ। अर्थात् सदा तेरे ही आश्रित आशीर्वादित रहूँ।

इति प्रेमानंद यति, यथा अल्यमति गीता, संक्षिप्ता, गंगा आगमन गाथा।

इस प्रकार अपने अल्पबुद्धि के अनुसार यति प्रेमानंद के द्वारा गाया हुआ संक्षिप्त गंगा - आगमन गीत समाप्त हुआ।

ॐ श्री गंगार्पणमस्तु ।

संक्षिप्त जीवन-परिचय

पूर्वाश्रम नाम :	देवेन्द्रनाथ
पिता का नाम :	मधुसूदन
माता का नाम :	वसन्तकुमारी
जन्म :	१२ जून १९३९ ई.
जन्म स्थान :	स्वाराज्य आश्रम (भेलेई पदा)
परगना :	आठगड, कटक (उड़ीसा)
शिक्षा :	कृषि विज्ञान-स्नातक
आध्यात्मिक रुचि :	बाल्यकाल से जीवन के अनेकानेक घटनाओं से परिलक्षित
गृह त्याग :	१९५९ई.
संन्यास दीक्षा :	पूज्य स्वामी शिवानन्दजी महाराज से १९६१ ई. में
तपस्थली एवं समाज सेवा :	गणेशपुर, उत्तरकाशी १९६४ के उपरान्त
साधना तपस्या :	अयाणा (गणेशपुर), वनदुर्गा पीठ पर्वत शिखर
साहित्य रुचि :	बाल्यकाल से उड़िया साहित्य में एवं संन्यास उपरान्त हिन्दी साहित्य में
समाज सेवा (कर्म योग) :	गणेशपुर में शिवानन्द आश्रम की स्थापना, गो-सेवा, रोगी सेवा के लिए निःशुल्क चिकित्सालय की स्थापना, सामयिक स्वास्थ्य शिविरों का आयोजन, विद्यार्थियों को आर्थिक, आवासीय एवं अन्य आवश्यक सहायताएँ निरन्तर प्रदान करना।

दिव्य जीवन संघ प्रकाशन